अथ शब्द परिच्छेदः ।

शाब्द बोधप्रकारं दर्शयन्ति—

"पदज्ञानं तु करणं" इत्यादि ग्रन्थसे ग्रन्थकार शाब्द बोधका प्रकार दिखलाते हैं।

का० नं० ८१ ।

पदज्ञानं तु करणं, द्वारं तत्र पदार्थधीः ।
शाब्दबोधः फलं तत्र शक्तिधीः सह कारिणी ॥

का० अर्थ ।

शाब्द बोधके प्रति पदज्ञान करण और पदजन्य पदार्थोपस्थिति व्यापार है पद और अर्थ इन दोनोंमें शक्ति रूप जो विशेषसम्बन्ध उस का ज्ञान सहकारी कारण है। अर्थात् पदज्ञानोत्तरशक्ति ज्ञानजन्य पदार्थोपस्थितिद्वारा शाब्दबोध रूप फल होता है।

(१) पदज्ञानं त्विति। नतु ज्ञायमानं पदं करणं पदाभावेऽपि मौनिश्लोकादौ शाब्दबोधात्।

(१) शाब्दबोधके प्रति ज्ञायमान पद करण नहीं होता है यदि माना जाय तो मौनि श्लोकादिसे अर्थात् जहांपर शब्द नहीं है किन्तु तद्बोधक लेखादिसे शाब्द ज्ञान होता है। वहां भी ज्ञायमान पद नहीं रहनेके कारण शाब्दबोध नहीं होगा अतः शाब्दबोधके प्रति ज्ञायमान पद करण नहीं है।

(२) पदार्थधीरिति। (३) पदजन्यपदार्थस्मरणं व्यापारः।

(२,३) पदजन्य जो पदार्थका स्मरण (ज्ञान विशेष) वही शाब्दबोधमें व्यापार है।

(४) अन्यथा पदज्ञानवतः प्रत्यक्षादिना पदार्थोपस्थितावपि शाब्दबोधापत्तेः।

(४) यदि केवल पदार्थज्ञानको व्यापार माना जाय तो पदज्ञानवान् पुरुषको जहांपर पदज्ञानजन्य पदार्थका ज्ञान नहीं हुआ है किन्तु चक्षुरादिहीसे पदार्थका ज्ञान हुआ है वहांपर भी पदज्ञानरूप करण और पदार्थज्ञानरूप व्यापार दोनोंके रहनेके कारण शाब्दबोध होना चाहिये। अतः पदज्ञानजन्य पदार्थोपस्थितिही व्यापार है। जिसके नहीं रहनेके कारण वहां शाब्दबोध नहीं होता है।

(५) तत्रापि वृत्त्या पदजन्यत्वं बोध्यम्।

(५) शाब्दबोधके प्रति जो पदजन्य पदार्थोपस्थितिको व्यापार कहागया है उसमें भी शक्ति, लक्षणान्यतरात्मक जो वृत्तिरूप सम्बन्ध उसके द्वारा जो पदजन्य पदार्थोपस्थिति वही व्यापार है।

(६) अन्यथा घटादिपदात्समवायसंबन्धेनाकाशस्मरणे जाते आकाशस्यापि शाब्दबोधापत्तेः।

(६) यदि जिस किसी सम्बन्धसे पैदाहुये पदजन्यपदार्थोपस्थितिको शाब्दबोधके प्रति व्यापार माना जाय तो घटादिपदके साथ आकाशका समवायसम्बन्ध रहनेके कारण जहांपर घटादिपदरूप एक सम्बन्धिज्ञानसे आकाशका स्मरण हुआ है। वहांपर भी समवाय सम्बन्धके द्वारा घटादिपदसे उत्पन्न हुये आकाशरूप पदार्थोपस्थितिके रहनेके कारण घटादिपदसे आकाशका भी शाब्दबोध होना चाहिये। अतः शक्ति लक्षणान्यतरात्मक वृत्तिरूप सम्बन्धद्वारा पदज्ञानसे उत्पन्न कियेगये पदार्थ स्मरणको शाब्दबोधका व्यापार मानना युक्त है। अतः समवायरूप सम्बन्धद्वारा घटादिपदसे आकाशका स्मरण होनेपर भी उक्त वृत्ति रूप सम्बन्धद्वारा घटादि पदजन्य आकाशका स्मरण नहीं होनेके कारण घट पदसे आकाशका शाब्दबोध नहीं होगा।

(७) वृत्तिश्च शक्तिलक्षणान्यतरः संबन्धः।

(७) शब्द और अर्थ इन दोनोंमें जो अर्थस्मृत्यनुकूल परस्पर सम्बन्ध विशेष उसका नाम वृत्ति है, वह शक्ति और लक्षणाके भेदसे दो प्रकार का है।

(८) अत्रैव शक्तिज्ञानस्योपयोगः। (९) पूर्वं शक्तिग्रहाभावे पदज्ञानेऽपि तत्संबन्धेन स्मरणानुपपत्तेः। (१०) पदज्ञानस्य च एक संबन्धिज्ञानविधयार्थस्मारकत्वम्।

(८) पदजन्य पदार्थोपस्थितिहीमें शक्तिज्ञानकी अपेक्षा है। (९) क्योंकि अर्थमें पदनिरूपितशक्तिके ज्ञानका अभाव रहनेसे पदज्ञान रहने परभी शक्ति रूपसम्बन्ध द्वारा पदजन्य पदार्थका स्मरण नहीं होता। (१०) हस्ती और हस्तिपक इन दोनोंमें परस्पर पाल्यपालक भावरूप संम्बन्ध जिस व्यक्तिको ज्ञात है। उस व्यक्तिको एक सम्बन्धीके ज्ञानसे दूसरेका जैसे स्मरण होता है। उसी प्रकार पद और अर्थ इन दोनोंमें शक्तिरूप सम्बन्धका, जिस व्यक्तिको ज्ञान है। उस व्यक्तिको पदात्मक एक सम्बन्धीके ज्ञानसे अर्थात्मक अपरसम्बन्धीका स्मरण होता है।

(११) शक्तिश्च पदेन सह पदार्थस्य संबन्धः। (१२) स चास्माच्छब्दादयमर्थो बोद्धव्य इतीश्वरेच्छारूपः। (१३) आधुनिके नाम्नि शक्तिरस्त्येव। (१४) एकादशेऽहनि पितानाम कुर्यादितीश्वरेच्छायाः सत्त्वात्। (१५) आधुनिके तु संकेतिते न शक्ति रितिसंप्रदायः। (१६) नव्यास्तु ईश्वरेच्छा न शक्तिःकिंत्विच्छैव। (१७) तेनाधुनिकसंकेतितेऽपि शक्तिरस्त्येवेत्याहुः। (१८) शक्ति ग्रहस्तुव्याकरणादितः।

(११) पदके साथ जो अर्थका सम्बन्ध विशेष उसका नाम शक्ति है। (१२) वह सम्बन्ध "अमुक पदजन्य बोधका विषय अमुक अर्थ हो" इत्याकारक ईश्वरेच्छारूप है। (१३) शङ्का—किसीने शंका करते हैं कि लोकमें पितृकृत चैत्रमैत्रादि नाममें सङ्केतित व्यक्तियोंकी उक्त ईश्वरेच्छारूप शक्ति नहीं है। समा०—ऐसा नहीं उस आधुनिक चैत्र मैत्रादि नाममें उक्त ईश्वरेच्छा अवश्य है। (१४) क्योंकि "ग्यारहवें दिनमें पिता पुत्रका नामकरण करे" इस अभिप्रायकी श्रुति है। और उसमें नामपद सामान्य रूपसे चैत्र मैत्रादि सब नामोंका बोधक है। अतः आधुनिक नामोंमें ईश्वरेच्छा माननी होगी। (१५) केवल हमी लोगोंसे संकेत किये गये नदी वृद्धि आदि पदमें शक्ति नहीं है किन्तु परिभाषा आधुनिकसङ्केत मात्र है, ऐसा साम्प्रदायिक लोग मानते हैं। (१६) नवीन आचार्य तो ईश्वरेच्छारूप शक्ति नहीं मानकर केवल इच्छामात्रको शक्ति मानते हैं। (१७) अतएव वे आधुनिक सङ्केतविषय नदी वृद्धि चैत्र मैत्रादि पदनिष्ठ सङ्केतभी शक्तिही है ऐसा कहते हैं। (अतएव अनीश्वरवादी मीमांसक और चार्वाक आदिके मतमें भी समन्वय होजाता है)। (१८) उक्त शक्तिका ज्ञान व्याकरणादिसे होता है उसे दिखलाते हैं।

(१९) "तथाहि शक्तिग्रहं व्याकरणोपमान कोशाप्तवाक्या द्व्यवहारतश्च। वाक्यस्य शेषाद्विवृतेर्वदन्ति सांनिध्यतः सिद्धपदस्य वृद्धाः" ॥

(१९) पदनिष्ठ शक्तिका ज्ञान—(१) व्याकरण (२) उपमान (३) कोष (४) आप्त वाक्य (५) व्यवहार (६) वाक्य शेष (७) विवरण (८) और प्रसिद्ध पदके सांनिध्यसे होता है ऐसा वृद्धविद्वान् कहते हैं।

(२०) धातु प्रकृति प्रत्ययादीनां शक्तिग्रहो व्याकरणाद्भवति। (२१) क्वचित्सति बाधके त्यज्यतेऽपि। (२२) यथा वैयाकरणैराख्यातस्य कर्तरि शक्ति रुच्यते। (२३) चैत्रः पचती त्यादौ कर्त्रासह चैत्रस्याभेदान्वयः। (२४) तच्च गौरवात्त्यज्यते किंतुकृतौ शक्तिर्लाघवात्। (२५) कृतिश्चैत्रादौ प्रकारीभूय भासते।

(२०) धातु प्रकृति और प्रत्यय आदिका शक्तिज्ञान व्याकरण से होता है। (२१) किन्तु कहीं गौरवादि दोषके कारण त्यागभी किया जाता है। (२२) जैसे- वैयाकरण आख्यात (तिङ्) की शक्ति कृत्याश्रय (कर्त्ता) में मानते हैं। (२३) * "चैत्रः पचति" इत्यादि वाक्यमें आख्यातार्थ कृत्याश्रय (कर्ता) के साथ चैत्रका अभेद सम्बन्धसे अन्वय होता है। (२४) अनन्त कृतिमें शक्यतावच्छेदकत्वकी कल्पना प्रयुक्त गौरव दोषके भयसे कृत्याश्रयमें शक्तिका त्याग किया जाता है। किन्तु जात्यात्मक कृतित्वरूप शक्यतावच्छेदकमें ला-

* "चैत्रः पचति" इस वाक्य से चैत्राभिन्न एक कर्तृनिष्ठ वर्तमान कालिक पाक क्रिया, ऐसा शाब्द बोध होता है।

घवके अनुरोधसे कृतिहीमें शक्ति मानी जाती है। तात्पर्य यह है कि कर्त्ताका अर्थ कृत्याश्रय हुआ। उसमें शक्ति माननेसे वह आख्यातका शक्य कहा गया है शक्यमें विशेषण जो कृति वह शक्यतावच्छेदक हुई। कृति अनन्त है, इसलिये अनन्त व्यक्तियों में शक्यतावच्छेदकत्वकी कल्पना करनेसे गौरव हुआ। और कृतिमें शक्तिमाननेसे कृति शक्य हुई। शक्यतावच्छेदक कृतित्वजातिको एक होनेके कारण शक्यतावच्छेदकत्वकी कल्पनामें लाघव हुआ। (२५) † न्याय सिद्धान्तकी रीतिसे (आख्यातार्थ) कृति चैत्र आदि कर्त्तामें समवाय सम्बन्धसे विशेषण होकर शाब्दबोधका विषय होती है।

(२६) नच कर्तुरनभिधानाच्चैत्रादि पदानन्तरं तृतीया स्यादिति वाच्यं, कर्तृसंख्यानभिधानस्य तत्र तन्त्रत्वात्।

(२६) शङ्का—वैयाकरणानुयायी न्यायसिद्धान्त पर दोष देते हैं कि लाघवके अनुरोधसे आख्यातका अर्थ यदि कृतिको मानाजायतो "चैत्रः पचति" इस स्थलमें चैत्र रूप कर्तृवाचक पदसे तृतीया की आपत्ति होजायगी। क्योंकि नियम है कि "आख्यात कृत तद्धित, समास इन चारोंमें एकसे भी उक्त कारकमात्रमें प्रथमा होती है और अनुक्तकर्ता आदि कारकों में तृतीयादि विभक्तियां होती हैं" तब उक्त वाक्यमें आख्यातसे चैत्र उक्त नहीं हुआ किन्तु तन्निष्ठ कृतिरूपधर्म उक्त हुआ। अतएव तृतीया होनी चाहिये। जिसहेतु "अनभिहिते" इस अधिकार सूत्रका सम्बन्ध "कर्तृ करणयोस्तृतीया" इस सूत्रमें है। समा०—ऐसी आपत्ति नहीं होसकती क्योंकि आख्यातका कृति काल और संख्या आदि अनेक अर्थ होते हैं। तब "कर्तृकरणयोस्तृतीया" इस सूत्र का आख्यातसे अनुक्तकर्त्तामें तृतीया हो। ऐसा अर्थ नहीं स्वीकारकर आख्यातसेअनुक्त कर्तृगत संख्यामें तृतीया हो ऐसा अर्थ करनेसे कर्तृगत संख्याकी अनुक्तिहीको तृतीयोत्पत्तिमें कारण माननेके हेतु उक्त आपत्ति न होगी।

(२७) संख्याभिधानयोग्यश्च कर्मत्वाद्यनवरुद्धः प्रथमान्तपदोपस्थाप्यः। (२८) कर्मत्वादीत्यस्येतर विशेषणत्वेन तात्पर्याविषयत्वमर्थः।

(२७,२८) शङ्का—कर्ता आदि कारकमें रहनेवाली संख्या आख्यातसे किस प्रकार उक्त एवं अनुक्त समझी जायगी। समा०—कर्मत्वाद्यनवरुद्ध अर्थात् कर्मत्वादि विशेषणत्वेन तात्पर्याविषय एवं प्रथमान्तपदोपस्थाप्य जो कारक तद्गत संख्या आख्यातसे उक्त होती है। जैसे-"चैत्रः पचति" इसवाक्यसे पाकानुकूल कृतिमान् चैत्रः इत्याकारक शाब्द बोध हो, ऐसा वक्ताका तात्पर्य रहने के कारण कर्मत्वादि विशेषणत्वेन तात्पर्याविषय और प्रथमान्त पदोपस्थाप्य चैत्र गत संख्याका अभिधान आख्यातसे होताहै। "एवं तण्डुल

† यही सिद्धान्त है कि सर्वत्र वाक्यार्थ बोध में प्रथमान्त पदार्थ ही मुख्य विशेष्य होता है। जैसे—"चैत्रः पचति" इस वाक्य से विक्लित्यनुकूल व्यापारानुकूल वर्तमान कालिक कृतिमान् एकत्व वाँ श्चैत्रः इत्याकारक बोधहोता है।

पच्यते " इस वाक्यसे पाक निरूपित कर्मतावत्तण्डुलम् इत्याकारक शाब्द बोध हो ऐसा वक्ताका तात्पर्य रहने के कारण कर्मत्वादि विशेषणत्वेन तात्पर्याविषय प्रथमान्त-पदोपस्थाप्य तण्डुलगत संख्याका आख्यातसे अभिधान होता है। अतएव " चैत्रःपचति " चैत्रौ पचतः, चैत्राः पचन्ति, एवं " तण्डुलं पच्यते " तण्डुले पच्येते, तण्डुलानि पच्यन्ते " इसप्रकार प्रयोग किया जाता है।

(२९) तेन चैत्र इव मैत्रो गच्छतीत्यादौ न चैत्रे संख्यान्वयः। (३०) यत्र कर्मादौ न विशेषणत्वे तात्पर्यं तद्वारणाय प्रथमान्तेति।

(२९) कर्मत्वादि विशेषणत्वेन तात्पर्याविषयत्व शब्दका इतर विशेषणत्वेन तात्पर्या-विषयत्व अर्थ है यदि ऐसा अर्थ नहीं किया जायतो " चैत्र इव मैत्रो गच्छति "इस वाक्यस्थल-में भी कर्मत्वादि विशेषणत्वेन तात्पर्याविषय प्रथमान्तपदोपस्थाप्य चैत्रगत संख्याका आख्या-तसे अभिधान होजायगा और उक्तशब्दका इतर विशेषणत्वेन तात्पर्या विषयत्व अर्थ करनेसे इवार्थ सादृश्यमें चैत्रको विशेषण होनेके कारण इतर विशेषणत्वेन तात्पर्य्याविषय चैत्र नहीं हुआ। अतः चैत्रगत संख्याका अभिधान आख्यातसे नहीं होगा। शङ्का— यदि आप कहें कि चैत्रः स्वं पश्यति इसस्थल में चैत्र निष्ठ कर्मतानिरूपक दर्शनाश्रयः चैत्रः " इत्याकारक शाब्द बोध को वक्ताके तात्पर्यका विषय होनेके कारण चैत्रगत संख्याका आख्यातसे अभिधान नहीं होगा क्योंकि स्वपद बोध्य चैत्रको कर्मत्वका विशेषण होनेसे इतर विशेषणत्वेन तात्पर्याविषय चैत्र नहीं है। समा०— इतर विशेषणत्वेन तात्पर्या विषयशब्दका इतर विशेषणत्वमात्रेण तात्प-र्या विषय अर्थ है। उक्तस्थल में चैत्रको कर्मत्व विशेषणत्वेन और मुख्य विशेष्यत्वेन तात्पर्य विषय होनेके कारण इतर विशेषणत्व मात्रेण तात्पर्या विषय चैत्र होगया। अतः आख्यातसे तद्गत संख्याका अभिधान हो सकता है। (३०) प्राचीनोंका मत है कि प्रथमान्त पदोपस्था-प्यत्व विशेषण यदि नहीं दियाजाय तो तण्डुलं पचति इस स्थलमें तण्डुलनिष्ठ कर्मता निरूपक पाकानुकूल व्यापार वांस्तण्डुलः इत्याकारक बोध जहां वक्ताके तात्पर्यका विषय है अर्थात् पाकक्रियाके कर्मत्व रूपसे और कर्तृत्व रूपसे भी जहां तण्डुलही विवक्षित है वहां तण्डु-लको इतर विशेषणत्वमात्रेण तात्पर्याविषय होनेके कारण तण्डुलगत संख्याका आख्यातसे अभि-धान हो जायगा। अतः प्रथमान्त पदोपस्थाप्यत्व विशेषण देना युक्त है। " यत्रकर्मादौ न विशेषणत्वे तात्पर्यम् " इस जगह कर्मपदका कर्मत्व एवं विशेषणत्व पदका विशेषणत्वमात्र अर्थ है। यदि आप कहें कि " तण्डुलं पचति " इस स्थलमें जब पाक कर्मत्वेन और पाक कर्तृत्वेन तण्डुलही विवक्षित है तब तण्डुलगत संख्याका आख्यातसे अभिधान स्वीकार करनेमें कोई बाधा नहीं है। इस हेतु संख्याका अभिधान इष्ट है अतः प्रथमान्तपदोपस्थाप्यत्व विशेषण का उक्तफल नहीं हो सकता है। तोभी यदि प्रथमान्त पदोपस्थाप्यत्व विशेषण नहीं दिया जायगा तो " चैत्रेण सुप्यते " यहां चैत्रकर्त्तृक वर्त्तमानकालिक स्वाप इत्याकारक बोधमें वक्ताका तात्पर्य रहनेके कारण इतर विशेषणत्व मात्रेण तात्पर्याविषय स्वापमेंभी आख्यातसे संख्याका अभिधान होजायगा। अतः प्रथमान्त पदोपस्थाप्यत्व विशेषण देना आवश्यक है।

(३१) यद्वा धात्वर्थातिरिक्ताविशेषणत्वं प्रथमदलार्थः। (३२) तेन चैत्रइव मैत्रो गच्छतीत्यत्र चैत्रादेर्वारणम्। (३३) स्तोकं पचतीत्यादौ स्तोकादेर्वारणाय च द्वितीयदलम्। (३४) तस्य द्वितीयान्तोपस्थाप्यत्वाद्वार-णमिति।

(३१,३२) प्रथमान्तपदोपस्थाप्यत्व दलका प्रकारान्तरसे फल दिखलाने के लिये " कर्मत्वाद्यनवरुद्धत्व दलका यद्वेत्यादि " ग्रन्थ से अर्थ कहते हैं धात्वर्थातिरिक्त विशेषणत्व कर्मत्वाद्य नवरुद्धत्व शब्दका अर्थ है। अतः " चैत्र इव मैत्रो गच्छति " इस स्थलमें धात्वर्थातिरिक्त इवार्थ सादृश्यमें चैत्रको विशेषण होनेके कारण चैत्रगत संख्याका आख्या-त से अभिधान नहीं होता हैं (३३,३४) कर्मत्वाद्यनवरुद्धत्व दलका ऐसा अर्थ करने पर यदि प्रथमान्त पदोपस्थाप्यत्वात्मक द्वितीय दल नहीं दिया जायगातो "स्तोकं पचति" इस स्थलमें स्तोकाभिन्न पाकानुकूल कृतिमान् इत्याकारक शाब्दबोधमें स्तोकको धात्वर्थ पाकमात्रके विशेषण होनेसे स्तोक पदार्थमें आख्यातसे संख्याका अभिधान हो जायगा। अतः प्रथ-मान्तपदोपस्थाप्यत्वरूप द्वितीयदल देना आवश्यक है जोकि क्रियाविशेषण होनेके कारण द्वितीयान्तपदोपस्थाप्य अल्पात्मक स्तोक पदार्थमें नहीं है। अतः स्तोकगत संख्याका आख्या-तसे अभिधान नहीं होगा।

(३५) एवं व्यापारेऽपि न शक्तिगौरवात्। (३६) रथोगच्छती-त्यादौ तु व्यापारे आश्रयत्वे वा लक्षणा। (३७) जानातीत्यादौ तु आश्र-यत्वे नश्यतीत्यादौ प्रतियोगित्वे निरूढ़ लक्षणा।

(३५) " रथो गच्छति " इत्यादि स्थलोंमें गमनानुकूलव्यापारवान् रथः अथवा नवी-नों के मतसे " गमनाश्रयतावान् रथः " इत्याकारक ही शाब्द बोध होता है। अतः कृतिके समान व्यापारमें भी आख्यातकी शक्ति मानना जरूरी है। ऐसा नहीं कह सकते क्योंकि व्यापा-रमें शक्ति माननेसे जन्यत्व घटित व्यापारत्वमें शक्यता वच्छेदकत्वकी कल्पना करने से गौ-रव होगा कृतिमें शक्ति माननेसे कृतित्व जातिमें शक्यतावच्छेदकत्वकी कल्पनामें गौरव नहीं होगा। अतः लाघवात् कृतहीमें आख्यातकी शक्ति मानी जाती है। (३६) और " रथो गच्छति " इत्यादि स्थलमें व्यापार अथवा आश्रयत्वमें आख्यातकी लक्षणा मानकर व्यापारत्व वा आश्रयत्वकाबोध होता है। (३७) एवं " जानाति " इसस्थल में ज्ञानाश्रयताका और " नश्यति इसस्थल में ध्वंस प्रतियोगिताका बोध होनेके कारण उन २ स्थलोंमें आख्यातकी आश्रत्व एवं प्रतियोगित्वमें निरूढ़ लक्षणा अर्थात् अनादि तात्पर्य विषय लक्षणा मानी जाती है।

(३८) उपमानाद्यथा शक्ति ग्रहस्तथोक्तम्।

(३८) उपमानसे जिस प्रकार शक्तिका ग्रह होता है वह उपमान खण्डहीमें कहा जा चुका है।

(३९) एवं कोशादपि शक्तिग्रहः । सति बाधके क्वचित्यज्यते । (४०) यथानीलादि पदानां नीलरूपादौ नीलादि विशिष्टे च शक्तिः कोशेन व्युत्पादिता तथापि लाघवान्नीलादावेव शक्तिः । नीलादिरूप विशिष्टे तु लक्षणेति।

(३९) इसीप्रकार कोषसेभी शक्तिग्रह होता है । परन्तु जिस अर्थमें जिस पदका शक्ति कोषसे ज्ञापित है उस अर्थमें उस पदकी शक्ति माननेमें यदि गौरवादि दोष होता है तो उस अर्थ में उस पदकी शक्ति नहीं मानी जाती है । (४०) जैसे " गुणे शुक्लादयः पुंसि गुणि लिङ्गास्तु तद्वति " इस कोषसे शुक्लनीलादिपदकी शुक्लनीलादिरूप एवं तादृश रूप विशिष्ट इन दोनोंमें शक्ति ज्ञापित है । परन्तु तादृश रूपाश्रयमें शक्ति माननेसे तादृश रूपमें शक्यता वच्छेदकत्वकी कल्पना प्रयुक्त गौरव होगा । अतः शुक्लादिपदकी केवल शुक्लरूपादिमें लाघवात् शक्ति है । और शुक्लरूपाश्रयमें लक्षणा मानकर शुक्लादिपदसे शुक्लरूपाद्याश्रयका बोध होता है ।

(४१) एवमाप्त वाक्यादपि । यथा कोकिलः पिकपद वाच्यः इत्यादि शब्दात्पिकादि पद शक्ति ग्रहः ।

(४१) इसीप्रकार आप्त वाक्यसे भी शक्तिका ज्ञान होता है जैसे " कोकिलः पिक पद वाच्यः " इत्यादि आप्त वाक्योंसे कोकिल रूप अर्थमें पिक पदकी शक्तिका ज्ञान होता है ।

(४२) एवं व्यवहारादपि । (४३) यथा प्रयोजक वृद्धेन घटमानयेत्युक्तम् (४४) तच्छ्रुत्वाप्रयोज्य वृद्धेन घट आनीतः । (४५) तदवधार्य पार्श्वस्थो बालो घटानयन रूपं कार्यं घट मानयेति शब्द प्रयोज्यमित्यवधारयति ।

(४२) इसप्रकार व्यवहारसे भी शक्तिका ज्ञान होता है । (४३) जैसे प्रेषक वृद्ध पुरुष से " घट मानय " ऐसा कहागया । (४४) उसे सुनकर प्रेष्य वृद्धसे घट लाया गया । (४५) इस प्रकार घटके आनयनको देखकर समीपवर्ती सावधान लड़का ऐसा ज्ञान करता है कि " घट मानय " शब्दका प्रयोज्य घटानयनरूप कार्य है ।

(४६) ततश्च घटं नय गामानयेत्यादा वावापोद्वापाभ्यां घटादिपादानां कार्यान्वितघटादौ शक्तिं गृह्णाति । (४७) इत्थं च भूतले नीलो घटः इत्यादिशब्दान्न शाब्दबोधः । (४८) घटादिपदानां कार्यान्वित घटादिबोधे सामर्थ्यावधारणात्कार्यतावोधं प्रति च लिङादीनां सामर्थ्यात्तदभावान्न शाब्दबोध इत्यपि केचित् । (४९) तन्न प्रथमतः कार्यान्वितघटादौ शक्त्यवधारणेऽपि लाघवेन पश्चात्तस्य परित्यागौचित्यात् । (५०) अत एव चैत्र,पुत्रस्ते जातः कन्याते गर्भिणीजाता इत्यादौ मुखप्रसाद मुखमालिन्याभ्यां सुखदुःखे अनुमाय तत्कारणत्वेन परिशेषाच्छाब्दबोधं निर्णीय तद्धेतुतया तं शब्दमवधारयति । (५१) तथा च व्यभिचारात्कार्यान्विते न शक्तिः । (५२) न

च तत्र तं पश्येत्यादि शब्दान्तर मध्याहार्यं, मानाभावात् । (५३) चैत्र पुत्रस्ते जातो मृतश्चेत्यादौ तदभावाच्च । (५४) इत्थं च लाघवादन्वितघटेऽपि शक्तिं त्यक्त्वा घटपदस्य घटमात्रे शक्तिमवधारयति ।

(४६) * तब " घटं नय " घटको ले जाओ " गामानय " गौको लाओ । ऐसा पुनः प्रेषक वृद्धसे कहा गया तथा प्रेष्यवृद्धसे वैसाही किया भी गया । इस स्थितिमें उक्त बालक आवापोद्वाप (तर्क वितर्क) से घट पदका परम्परया कार्यत्वान्वित कम्बुग्रीवादि मद्व्यक्तिमें और आनयका आनयन क्रियामें तथा नयका नयन क्रियामें और गो पदका परम्परया कार्यत्वान्वित गोव्यक्तिमें शक्तिका निश्चय प्राप्त करता है । (४७,४८) व्यवहारसे कार्यत्वान्वित अर्थहीमें पदकी शक्तिका ज्ञान हुआ है । अतः पदोंसे कार्यत्वान्वित अर्थहीका बोध होनाचाहिये । कार्यताका बोध लिङ्, लोट् तव्यत्, अनीयर् इत्यादि प्रत्ययोंसेही होता है अतएव जिस स्थलमें कार्यताबोधक प्रत्यय नहीं है उस स्थलमें शाब्दबोध नहीं होता अतः "भूतले नीलो घटः" इत्यादि स्थलमें कार्यताबोधक प्रत्यय नहीं रहनेके कारण शाब्दबोध नहीं होगा । यह प्रभाकरका मत है । (४९) लेकिन यह मत ठीक नहीं है । क्योंकि पहले कार्यतासे अन्वित अर्थमें पदनिरूपित शक्तिका ज्ञान व्यवहारसे होनेपरभी पीछे कार्यत्वान्वित घटादिमें घटादिपदकी शक्ति माननेसे गौरव है । ऐसा ज्ञान होनेपर लाघवात् घटपदकी शक्ति शुद्ध घटत्वावच्छिन्नहीमें निश्चितकी जाती है, इस लिये " भूतले नीलोघटः " इत्यादि स्थलमें भी शाब्दबोध होनेमें कोई बाधा नहीं है । (५०,५१) जिसहेतु घटादि पदोंकी केवल घटत्वावच्छिन्नमें शक्तिमानी गई है अतः " चैत्र पुत्रस्ते जातः कन्याते गर्भिणी " इत्यादि वाक्य सुननेपर क्रमसे चैत्रके मुखपर प्रसाद और मालिन्य दोनों होनेके कारण चैत्रमें सुख दुःखका अनुमान कियाजाता है और चैत्रके उक्त सुख दुःखका कारण कोई दूसरा ज्ञात नहीं होता है । अतः परिशेषात् शाब्दबोधही कारण है ऐसा मानाजाता है । और उस शाब्दबोधका कारण " चैत्र पुत्रस्ते जातः कन्याते गर्भिणी " इत्याकारक शब्दही है यह निश्चय होता है । भाव यह है कि उक्त वाक्यसे यदि शाब्दबोध नहीं होता तो चैत्रका मुख प्रसाद और मुख मालिन्य होना असम्भव था अतः उक्त स्थलमें शाब्दबोध मानना आवश्यक है किन्तु यदि कार्य्यत्वान्वित अर्थहीमें पदकी शक्तिमानी जाय तो कार्य्यतासे

* लिङ् लोट् तव्यत् अनीयर् इत्यादि प्रत्ययोंसे कार्यताका बोध होता है । " घट मानय " इस वाक्य स्थलमें घटका द्वितीयार्थ कर्मतामें निष्ठत्व सम्बन्धसे और घटसे अन्वित कर्मताका आनयन क्रियामें निरूपकत्व सम्बन्धसे एवं लिङादि प्रत्ययार्थ कार्यताका आनयनमें स्वरूप सम्बन्धसे अन्वय होता है इस लिये कार्यतासे परम्परया अन्वित घटभी है और प्रयोजक प्रयोज्य दोनों वृद्धोंका व्यवहार उक्त लिङ्लोट् आदि कार्यता वाचक प्रत्ययान्त पद घटित वाक्यों के स्थलहीमें बालकसे देखागया है । अतएव बालकको साक्षात् अथवा परम्परया कार्यत्वान्वित घटादिरूप अर्थहीमें व्यवहारसे शक्तिका ज्ञान होता है । अतएव कार्यत्वान्वितार्था भिधानवादीके मतमें साक्षात् परम्परा साधारण कार्यत्वान्वितार्थ विषयक शाब्दबोधके प्रति सामान्यतः पदत्वेन कारणता मानी जाती है । मुक्तावलीमें कार्यपद कार्यता बोधक है ।

अनन्वित अर्थकाभी उक्त वाक्यस्थलमें शाब्दबोध होता है, परन्तु अब नहीं होगा। (५२,५३) यहाँ उक्त वाक्यमें व्यभिचार दोष वारणार्थ "तं पश्य" इत्यादि कार्यता बोधक प्रत्यय घटित वाक्यका अध्याहार करेंगे अतः उक्त स्थलमें कार्यतान्वितही अर्थका बोध होनेके कारण व्यभिचार नहीं होगा, यह कथन भी उचित नहीं है। क्योंकि अध्याहारमें कोई प्रमाण नहीं है। और "चैत्र पुत्रस्तेजातो मृतश्च" इत्यादि स्थलमें पुत्रकी अविद्यमानताके कारण "तं पश्य" इत्यादि अध्याहारभी नहीं होसकता। (५४) घटत्वाद्यपेक्षया गुरु कार्यत्वान्वित-घटत्वादिमें घटादिपदशक्यता वच्छेदकत्वकी कल्पनाप्रयुक्त, एवं घटादिविषयक शाब्दबुद्धित्वा-पेक्षयागुरु कार्यत्वान्वित घटादिविषयक शाब्दबुद्धित्वमें घटादिपदज्ञान जन्यता वच्छेदकत्वकी कल्पना प्रयुक्त गौरवके भयसे यथा प्रभाकरमतसिद्ध कार्यत्वान्वित घटादिमें घटादिपदकी शक्तिनहीं मानकर शुद्ध घटत्वावच्छिन्नमें घटादिपदकी शक्तिमानी जाती है तथा कुमारिलभट्ट मतसिद्ध अन्वितघटादिमें घटादिपदकी शक्ति माननेसेभी घटत्वादि एवं घटविषयक शाब्दबुद्धित्वाद्य-पेक्षयागुरु अन्वितघटत्वादि एवं अन्वित घटविषयक शाब्दबुद्धित्वादिमें घटादिपदशक्यता-तावच्छेदकत्व एवं घटादिपदज्ञान जन्यतावच्छेदकत्वकी कल्पनाप्रयुक्त गौरवहोगा अतः घटादिपदकी शक्ति शुद्धघटत्वाद्यवच्छिन्नमेंही मानी जाती है पदार्थान्तरका अन्वय (सम्बन्ध) का ज्ञान तो आकाङ्क्षा ज्ञानहीसे होजाताहै इस हेतु अन्वयांशमें शक्ति मानना व्यर्थ है।

(५५) एवं वाक्यशेषादपि शक्तिग्रहः। (५६) यथा यवमयश्चरुर्भवतीत्यत्र यवपदस्य दीर्घ शूकविशेषे आर्याणां प्रयोगः कङ्गौ च म्लेच्छानाम्, तत्र हि अथान्या ओषधयोम्लायन्तेऽथैते मोदमनास्तिष्ठन्ति इति वाक्य शेषाद्दीर्घशूके शक्तिर्निर्णीयते कङ्गौतु शक्तिभ्रमात्प्रयोगः नानाशक्ति कल्पने गौरवात्।

(५५,५६) इसी प्रकार वाक्यशेषसेभी शक्तिज्ञान होता है। जैसे यज्ञप्रकरणमें "यवमयश्चरुर्भवति" इस वाक्य में यव पदसे यवान्नका ग्रहण है, अथवा कङ्गुका ग्रहण है। क्योंकि याजक लोग उक्त शब्दका दीर्घ शूक (शूङ) वाले अन्नमें तथा म्लेच्छ लोग कौनीमें प्रयोग करते हैं, ऐसा सन्देह होनेपर "अथान्या ओषधयो म्लायन्तेऽथैते मोदमानास्तिष्ठन्ति" प्रकरणान्तमें इस वाक्य शेष अर्थात् अवशिष्ट वाक्यको देखकर दीर्घ शूङ्वाले अन्नमेंही यव पदकी शक्तिका निश्चय कियाजाता है। और म्लेच्छ लोग भ्रमात्मक शक्ति ज्ञानसे कौनीमें यव पदका प्रयोगकरते हैं ऐसा मानाजाता है। यव पदमें विना प्रमाणके उभय अर्थ निरूपित नाना शक्तिकी कल्पनामें गौरव है।

(५७) हर्यादिपदे तु विनिगमकाभावान्नानाशक्ति कल्पनम्। (५८) एवं विवरणादपि शक्तिग्रहः। (५९) विवरणं तु तत्समानार्थक पदान्तरेण तदर्थकथनम्। (६०) यथा घटोऽस्तीत्यस्य कलशोऽस्तीत्यनेन विवरणाद्घटपदस्य कलशे शक्तिग्रहः। (६१) एवं पचतीत्यस्य पाकं करोतीत्यनेन विवरणादाख्यातस्य यत्नार्थकत्वं कल्प्यते।

(५७) इस प्रकार हरिआदि पदमेंभी तुल्य युक्त्या गौरव होनेके भयसे नानाशक्तिकी कल्पना नहीं होसकती ऐसा नहीं कहसकते। क्योंकि दीर्घ शूक विशिष्टमें यव पदकी शक्ति है इसमें उक्त वाक्यशेषरूप प्रमाण है और कङ्गुनिष्ठ शक्तिमें कोई प्रमाण नहीं है अतः नानाशक्ति गौरवके भयसे नहीं मानी जाती और हर्यादि पदमें यह बात नहीं है। इसलिये इन्द्र, सूर्य, वासुदेवादि प्रत्येक अर्थमें शक्ति साधक प्रमाण रहनेके कारण विनिगमनाविरहात् किसी एकही अर्थमें आप शक्ति नहीं मान सकते किन्तु नाना शक्तिही माननी पड़ेगी। (५८) इसी प्रकार विवरणसेभी शक्तिका ज्ञान होता है। (५९) समानार्थक भिन्न पदद्वारा जो पदों के अर्थका व्याख्यान, उसे विवरण कहते हैं। (६०) जैसे "घटोऽस्ति" इस वाक्यका "कलशोऽस्ति" ऐसा विवरण करनेसे घटपदनिष्ठ शक्तिका कलशरूप अर्थमें ज्ञान होता है। (६१) इसी प्रकार "पचति" इस वाक्यका "पाकं करोति"। इस प्रकार यत्नार्थक कृ धातुसे विवरण करनेसे आख्यातकी शक्तिकी कल्पना यत्नरूप अर्थमें की जाती है।

(६२) एवं प्रसिद्धपदसांनिध्यादपि शक्तिग्रहः। (६३) यथा इह सहकारतरौ मधुरं पिको रौतीत्यादौ पिकपदस्य कोकिले शक्तिग्रह इति।

(६२) इसीप्रकार प्रसिद्ध अर्थात् गृहीत शक्तिक पदके सान्निध्यसे भी शक्तिग्रह होता है। (६३) जैसे "इह सहकारतरौ पिको मधुरं रौति" इस वाक्यमें प्रसिद्ध सहकार, मधुर तथा रौति पदके सान्निध्यसे पिक पदकी कोकिल नामक पक्षिविशेषमें विना कोषादि ज्ञानके भी शक्तिका ज्ञान होता है।

(६४) तत्र जातावेव शक्तिर्नतु व्यक्तौ व्यभिचारादानन्त्याच्च। (६५) व्यक्तिं विना च जातिभानस्यासंभवाद्व्यक्तेरपि भानमिति केचित्। (६६) तन्न। शक्तिं विना व्यक्तिभानानुपपत्तेः।

(६४) पर मतका निराकरण करते हुए अपने मतको व्यवस्थापित करनेके लिये जाति (धर्म) मात्रमें शक्ति मानने वाले मीमांसकके मतका प्रतिपादन करते हैं कि जाति मात्रमें पदकी शक्ति माननी चाहिये व्यक्तिमें नहीं क्योंकि यदि व्यक्तिमें भी शक्ति मानेंगे तो यह प्रश्न उठेगा कि यत् किञ्चित् व्यक्तिमें शक्ति मानते हैं अथवा सभी व्यक्तिमें। प्रथम पक्षमें व्यभिचार होजायगा अर्थात् जिस व्यक्तिविशेषमें गो आदि पदका शक्तिज्ञान नहीं है उसका भी शाब्दबोध होताहै इसलिये तद्विषयक शाब्दबोधमें तद्धर्मिक शक्तिज्ञान कारण है इसकार्य कारणभावमें व्यभिचार होजायगा। द्वितीय पक्षमें व्यक्तिके अनन्त होनेसे शक्तिमेंभी आनन्त्य होजायगा, और उन अनन्त शक्तियोंका ज्ञान सर्वज्ञेतर पुरुषको नहीं होसकनेके कारण अस्मदादि व्यक्तिको शाब्दबोध नहीं होगा। (६५) जातिमात्रमें शक्ति माननेसे व्यक्तिका शाब्दबोधमें भान कैसेहोगा इस प्रश्नका उत्तर यह है कि व्यक्ति भानके विना जातिका भान नहीं होसकता है।

इसलिये व्यक्तिकाभी भान होजायगा अर्थात् जाति भासक सामग्रीकोही व्यक्तिकाभी भासक माननेसे जाति भासक सामग्रीसेही व्यक्तिकाभी भान होजायगा। फिर व्यक्तिमें शक्ति मानना व्यर्थ है, यह मीमांसकका मत है। (६६) किन्तु यह ठीक नहीं है क्योंकि तद्विषयक शाब्दबोधके प्रति पदज्ञानजन्य तद्विषयक उपस्थिति कारण है। ऐसी दशामें यदि जातिमात्रमें शक्ति मानी जायगी तो जाति मात्रको पदसम्बन्धी होनेके कारण एक सम्बन्धिज्ञानविधया व्यक्तिकी उपस्थिति नहीं होनेके कारण व्यक्तिका शाब्दबोधमें भान नहीं हो सकेगा।

(६७) न च व्यक्तौ लक्षणा, अनुपपत्तिप्रतिसन्धानं विनापि व्यक्तिबोधात्। (६८) न च व्यक्तिशक्तावानन्त्यं सकलव्यक्तावेकस्या एव शक्तेः स्वीकारात्। (६९) न चाननुगमः, गोत्वादेरेवानुगमकत्वात्।

(६७) यदि आपकहें कि "व्यक्तिमें लक्षणा मानते हैं" तब शक्ति न मानने परभी व्यक्तिका लक्षणासेही बोध होजायगा-यहभी युक्त नहीं है। क्योंकि अन्वयानुपपत्तिज्ञान होनेपर लक्षणासे लक्ष्यार्थका बोध होता है। "गौरस्ति" इत्यादि स्थलमें गोत्वमें अस्तित्वका अन्वयानुपपत्तिज्ञान नहीं रहनेके कारण लक्षणासे गोव्यक्तिका शाब्दबोध नहीं होगा। (६८,६९) हमारे मतमें व्यक्तिके आनन्त्यसे शक्तिमें आनन्त्यकी आपत्ति नहीं होसकती क्योंकि सभी व्यक्तियोंमें ईश्वरेच्छारूप एकही शक्ति मानते हैं। इसपर यदि आप ऐसा कहें कि शक्तिज्ञानाविषयपदार्थका प्रकारतया या विशेष्यतया शाब्दबोधमें भान नहीं होता है किन्तु गवादि पदोंसे सकल गवादिकी स्मृति एवं शाब्दबोध होताहै अतः गवादिपदजन्य सकल तत्तत् गवादिविषयक स्मृति एवं शाब्दबोधके प्रति सकल तत्तत् गवादिविषयक शक्तिज्ञानको कारण मानना होगा तब सकल तत्तत् गवादि विषयक शक्तिज्ञाननिष्ठ कारणताकी विषयितासंबन्धसे अवच्छेदकता सकल तत्तत् गवादिको नहीं मानसकते क्योंकि उनका कोई अनुगमक धर्म नहीं है। लेकिन यहभी कथन ठीक नहीं है क्योंकि सकल गोका गोत्वरूपसे अनुगम करके कारणतावच्छेदक कोटिमें प्रवेश करते हैं। अर्थात् गोत्व प्रकारक गोविशेष्यक स्मृति और शाब्दबोधके प्रति गोत्वावच्छिन्न विषयक शक्तिज्ञानको कारण मानते हैं। अतः गोव्यक्तिको अनन्त होनेपरभी गोत्वको एक होनेके कारण गोमें रहनेवाला कारणतावच्छेदकत्व एक होजायगा।

(७०) किंच गौः शक्येति शक्तिग्रहो यदि तदा व्यक्तौ शक्तिः। यदि तु गोत्वं शक्यमिति शक्तिग्रहस्तदा गोत्वप्रकारकपदार्थस्मरणं शाब्दबोधश्च न स्यात्। (७१) समानप्रकारकत्वेन शक्तिज्ञानस्य पदार्थस्मरणं शाब्दबोधं प्रति च हेतुत्वात्।

(७०, ७१) शक्तिज्ञान विषय पदार्थमात्रका शाब्दबोधमें यदि भान मानाजाय तो शक्तिज्ञानाविषय संसर्गका शाब्दबोधमें भान नहीं होगा। अतः शक्तिज्ञान विषय पदार्थमात्रका

शाब्दबोधमें भान होता है यह नियम नहीं मानसकते हैं। तब घटपदनिष्ठ शक्तिज्ञानाविषय गवादिका घटपद जन्य स्मृति और शाब्दबोधमें भानकी आपत्ति लगेगी अतः गोत्वप्रकारक गोविशेष्यक स्मृति और शाब्दबोधके प्रति गोत्वनिरूपित शक्तिज्ञानको कारण मानते हैं। फिर व्यक्तिमें शक्ति मानना व्यर्थ है। इस मीमांसक मतका खण्डन "किञ्चेत्यादि" ग्रन्थसे कियाजाता है कि जातिमात्र शक्तिवादी मीमांसक गौः गोपदशक्या इस प्रकारका यदि शक्तिज्ञान मानें तो व्यक्तिमेंभी शक्ति माननी होगी। क्योंकि अन्यथा ख्याति नहीं माननेवाले मीमांसक व्यक्तिमें शक्ति नहीं मानकर गौः गोपदशक्या ऐसा शक्तिज्ञान नहीं मानसकते यदि गोत्वम् गोपद शक्यं ऐसा शक्तिज्ञान मानें तो इस शक्तिज्ञानसे गोत्व प्रकारक गो विशेष्यक स्मृति और शाब्दबोध नहीं होसकता है क्योंकि नियम है कि जो शक्तिज्ञान यत्प्रकारक होता है वह तत्प्रकारकही स्मृति और शाब्दबोधको उत्पन्न करता है। इसलिये गोत्वं गोपदशक्यं, इस शक्तिज्ञानको गोत्वत्व प्रकारक गोत्व विशेष्यक होने के कारण गोत्वत्व प्रकारक गोत्व विशेष्यक स्मृति और शाब्दबोधही उस शक्तिज्ञानसे उत्पन्न होंगे और गोत्वप्रकारक गोविशेष्यक स्मृति और शाब्दबोध नहीं उत्पन्न हो सकेंगे।

(७२) किंच गोत्वे यदि शक्तिस्तदा गोत्वत्वं शक्यतावच्छेदकं वाच्यम्। (७३) गोत्वत्वं तु गवेतरासमवेतत्वे सति सकलगोसमवेतत्वम्। (७४) तथा च गोव्यक्तीनां शक्यतावच्छेदकेऽनुप्रवेशात्तथैव गौरवम्।

(७२, ७३, ७४) जातिमात्र शक्तिवादी मीमांसकके मतमें यहभी दोष है कि गोत्वमें गोपदकी शक्ति माननेसे शक्यतावच्छेदक गोत्वत्वको मानना होगा। और गोत्वत्व गवेतरासमवेतत्वेसति (गौको छोड़कर अन्यत्र न रहना) सकल गो समवेतत्व (सभीगौओं में रहना) रूप होनेके कारण गोरूप व्यक्तिसे घटित है। अतः गोत्वत्वको शक्यतावच्छेदक माननेवाले मीमांसकको गोरूप व्यक्तिमेंभी शक्यतावच्छेदकत्व मानना पड़ा इससे गौरव होगा और नैयायिकको जातिरूप गोत्वमें शक्यतावच्छेदकत्व माननेके कारण गौरव नहीं होता है।

(७५) तस्मात्तत्तज्जात्याकृति विशिष्टतत्तद्व्यक्तिबोधानुपपत्त्या कल्प्यमाना शक्तिर्जात्याकृति विशिष्टव्यक्तौ विश्राम्यतीति।

(७५) इसलिये गोत्वादि तत्तत् जाति अथवा अवयव संयोगरूप आकृति अथवा व्यक्ति (धर्मी) मात्रमें शक्तिमाननेसे तत्तत् जाति और तत्तत् आकृतिविशिष्ट व्यक्तिका तत्तत् पदसे होनेवाली स्मृति और शाब्दबोधमें भान नहीं होगा अतः तत्तत् जाति एवं तत्तत्आकृतिविशिष्टव्यक्तिमें तत्तत् पदकी शक्ति मानी जाती है।

(७६) शक्तं पदं, तच्चतुर्विधम्, क्वचिद्यौगिकं क्वचिद्रूढं क्वचिद्योगरूढं क्वचिद्यौगिकरूढम्। (७७) तथाहि। यत्रावयवार्थ एव बुध्यते तद्यौगिकम्। (७८) यथा पाचकादि पदम्। (७९) यत्रावयवशक्तिनैरपेक्ष्येण समुदायशक्तिमात्रेण बुध्यते तद्रूढम्, यथा गोमण्डलादिपदम्।

(७६) न्याय मतमें शक्तिमत्त्व ही पदका लक्षण है । वह चार प्रकारका होता है—यौगिक, रूढ़, योगरूढ़ और यौगिकरूढ़ । (७७,७८) जो शब्द स्वघटक द्वारा स्वार्थका बोधक होता है वह यौगिक शब्द है जैसे—पाचक शब्द स्व घटक पच् धात्वर्थ (पाक) और अक (ण्वुल्) प्रत्ययार्थ (कर्ता) द्वारा पाककर्त्तारूप स्वार्थका बोधक होनेके कारण यौगिक कहलाता है । (७९) जो शब्द अपने अवयवार्थके विना स्वार्थका बोधक हो वह रूढ़ है । जैसे—गो और मण्डल आदि पद अपने अपने अवयवार्थके विना गोत्व विशिष्ट और गोलाकार वस्तुविशेषरूप स्वार्थका बोधक होनेके कारण रूढ़ कहलाते हैं ।

(८०) यत्र तु अवयवशक्तिविषये समुदायशक्तिरप्यस्ति तद्योगरूढ़म् । (८१) यथा पङ्कजादिपदम् । (८२) तथाहि पङ्कजपद-मवयवशक्त्या पङ्कजनिकर्तृत्वरूपमर्थं बोधयति । (८३) समुदायशक्त्या च पद्मत्वेन रूपेण पद्मं बोधयति । (८४) नच केवलयाऽवयवशक्त्या कुमुदे प्रयोगः स्यादिति वाच्यं, रूढ़िज्ञानस्य केवलयौगिकार्थज्ञाने प्रतिबन्धकत्वादिति प्राञ्चः ।

(८०,८३) जो शब्द अवयवार्थ और समुदायार्थ उभय द्वाराही स्वार्थका बोधकहो वह योगरूढ़ है । जैसे—पङ्कज शब्द अवयवार्थ (पङ्काधिकरणक उत्पत्त्याश्रय) और समुदायार्थ (पद्मत्वजातिविशिष्ट) इन दोनों अर्थोंके द्वारा ही स्वार्थका बोधक होनेके कारण योगरूढ़ कहा जाता है । (८४) शङ्का—कुमुदमें भी पङ्काधिकरणक उत्पत्त्याश्रयत्व रहनेके कारण पङ्कजपदसे केवल अवयव शक्तिसे कुमुदका बोध क्यों नहीं होता ? प्राचीनका समा०—तत्पदजन्य यौगिकार्थ मात्र विषयक बोधके प्रति तत्पदनिरूपित रूढ़ि (समुदाय शक्ति) का ज्ञान प्रतिबन्धक है । अतः पद्मत्वा वच्छिन्नमें पङ्कजपद निरूपितरूढ़िको जाननेवाले व्यक्तिको पङ्कज पदसे कुमुदका बोध नहीं होगा ।

(८५) वस्तुतस्तु, समुदायशक्त्युपस्थितपद्मेवयवार्थपङ्कजनिकर्तुरन्वयो भवति सांनिध्यात । (८६) यत्र तु रूढ्यर्थस्य बाधः प्रतिसंधीयते तत्र लक्षणया कुमुदादेर्बोधः । (८७) यत्र तु कुमुदत्वेन रूपेण बोधे न तात्पर्यज्ञानं पद्मत्वस्य च बाधस्तत्रावयवशक्तिमात्रेण निर्वाह इत्याहुः । (८८) यत्र तु स्थलपद्मादाववयवार्थबाधस्तत्र समुदायशक्त्या पद्मत्वेन रूपेण बोधः । (८९) यदि तु स्थलपङ्कजं विजातीयमेव तदा लक्षणयैवेति ।

(८५) और वास्तविक तो यह है कि पङ्कज पदकी समुदाय शक्तिसे उपस्थापित पद्मत्वावच्छिन्नमें अवयव शक्तिसे उपस्थापित पङ्काधिकरणक उत्पत्त्याश्रयका अन्वय[illegible] होनेके कारण अन्वय होता है । अतः पङ्कज पदसे पङ्काधिकरणक [illegible]

(कीचड़में पैदा होनेवाला कमल) ऐसा शाब्दबोध होता है । (८६) जहां पङ्कज पदके समुदायार्थ पद्मत्वका बाध निश्चय है । अथवा पद्मत्व विषयक बोधकी सामग्री नहीं है । और कुमुदत्व रूप से बोधमें तात्पर्यज्ञान है वहां पङ्कजपदसे लक्षणया कुमुदका बोध होता है । (८७) और जहांपर कुमुदत्वेन रूपेण बोधमें तात्पर्यज्ञान नहीं है और पङ्कजपदका समुदायार्थ जो पद्मत्व उसका बाध निश्चय अथवा पद्मत्व विषयक बोधकी सामग्रीका अभाव है वहांपर पङ्कजपदसे अवयव शक्तिमात्रोपस्थापित पङ्काधिकरणक उत्पत्त्याश्रयका, बोध होता है । (८८) जहांपर स्थलकमलमें पङ्कज पदके अवयवार्थ पङ्काधिकरणक उत्पत्त्याश्रयत्वका बाध निश्चय है । वहांपर पङ्कजपदसे केवल समुदाय शक्तिकी महिमासे पद्मत्वेन रूपेण स्थल पद्मका बोध होता है । (८९) यदि स्थल कमलमें पद्मत्व जाति प्रमाण सिद्ध नहीं हो किन्तु उसमें विलक्षण एक जाति मानी जाय तो पङ्कज पदसे लक्षणा द्वारा उस विलक्षण जातिके आश्रय जो स्थल कमल उसका बोध होगा ।

(९०) यत्रावयवार्थ रूढ्यर्थयोः स्वातन्त्र्येण बोधस्तद्यौगिकरूढ़म् । यथोद्भिदादिपदम् । तत्र हि उद्भेदनकर्ता तरुगुल्मादिरपि बुध्यते यागविशेषोऽपीति ।

(९०) जो शब्द कहीं केवल अवयवार्थ (यौगिकार्थ) का और कहीं केवल रूढ्यर्थ (समुदायार्थ) का बोधक होता है वह यौगिक रूढ़ कहलाता है जैसे-उद्भिदादि शब्द कहीं केवल यौगिकार्थ भूम्यादि के उद्भेदन कर्त्ता तरु गुल्मादिका और कहीं केवल रूढ्यर्थ उद्भिद् नामक याग विशेषका बोधक होनेके कारण यौगिक रूढ़ कहाजाता है ।

का० नं० ८२ पूर्वा०

लक्षणा शक्यसंबन्धस्तात्पर्यानुपपत्तितः ।

का० अर्थ ।

शक्य सम्बन्धका नाम लक्षणा है । तात्पर्यकी अनुपपत्ति जहां ज्ञात होती है उस जगह लक्षणासे पदार्थकी स्मृति और शाब्द बोध होते हैं ।

(१) गङ्गायां घोष इत्यादौ गङ्गापदस्य शक्यार्थे प्रवाहरूपे घोषस्यान्वयानुपपत्तिस्तात्पर्यानुपपत्तिर्वा यत्र प्रतिसंधीयते तत्र लक्षणया तीरस्य बोध इति ।

(१) "गङ्गायां घोषः" इत्यादि स्थलमें गङ्गापदके प्रवाह रूप शक्यार्थमें घोष पदार्थकी अन्वयानुपपत्ति अथवा [illegible] तात्पर्यानुपपत्तिका ज्ञान जहां [illegible]
लक्षणा[illegible]

(२) सा च शक्यसंबन्धरूपा । (३) तथाहि प्रवाहरूपशक्यार्थसंबन्धस्य तीरे गृहीतत्वात्तीरस्य स्मरणम् ततः शाब्दबोधः । (४) परंतु यद्यन्वयानुपपत्तिर्लक्षणाबीजं स्यात्तदा यष्टीः प्रवेशयेत्यत्र लक्षणा न स्यात् यष्टिषु प्रवेशान्वयस्यानुपपत्तेरभावात्, तत्र च यष्टि प्रवेशे भोजनतात्पर्यानुपपत्त्या यष्टिधरेषु लक्षणा ।

(२,३) लक्षणा शक्य सम्बन्ध रूप है " गङ्गायां घोषः " यहां गङ्गापदके प्रवाह रूप शक्यार्थका सामीप्यरूप सम्बन्ध जब तीरमें ज्ञात होता है तब एक सम्बन्धिज्ञानविधया पदज्ञानसे गङ्गापदके शक्य सम्बन्धी तीरका स्मरण और तदनन्तर उसका शाब्दबोध होता है। (४) अन्वयानुपपत्तिको यदि लक्षणाका बीज माना जाय तो यष्टिधरको भोजन कराने के तात्पर्यसे जहां " यष्टीः प्रवेशय ऐसा " कहागया है वहाँ यष्टिकी कर्मतामें और गृह की प्रवेश क्रियामें अन्वयानुपपत्ति नहीं रहने के कारण यष्टि पदका यष्टिधरमें लक्षणा नहीं होगी ।

(५) एवं काकेभ्यो दधि रक्ष्यतामित्यादौ काकपदस्य दध्युपघातके लक्षणा सर्वतो दधिरक्षायास्तात्पर्यविषयत्वात् । (६) एवं छत्रिणो यान्तीत्यादौ छत्रिपदस्यैकसार्थवाहित्वे लक्षणा । (७) इयमेवाजहत्स्वार्था लक्षणेत्युच्यते, एकसार्थवाहित्वेन रूपेण छत्रितदन्ययोर्बोधात् ।

(५,६,७) एवं दधिनाशक काक विलाड़ आदि जन्तुओंसे दधिरक्षाके तात्पर्यसे जहां " काकेभ्यो दधिरक्ष्यताम् " ऐसा कहा जाता है वहां काककी अन्वयानुपपत्ति नहीं रहने के कारण काक पदकी दधिनाशक जन्तुमें लक्षणा नहीं होगी । एवं छत्रधारी व्यक्तियोंके एक साथ जाने वाले जनसमूहके तात्पर्य से जहां " छत्रिणो यान्ति " ऐसा कहा जाता है वहां भी छत्रीकी अन्वयानुपपत्ति नहीं रहने के कारण छत्रिपदकी छत्रि सार्थवाही अर्थात् छत्रियोंके साथ जानेवाले जनसमूहमें लक्षणा नहीं होगी । और तात्पर्यानुपपत्तिको लक्षणाका बीज माननेपर क्रमसे उन उन स्थलोंमें यष्टिधरके भोजन तात्पर्य की अनुपपत्ति एवं सभी दध्युपघातकोंसे दधिरक्षा तात्पर्यकी अनुपपत्ति तथा छत्रि सार्थवाहीके गमन तात्पर्यकी अनुपपत्ति रहने के कारण उन उन स्थलोंमें लक्षणाकी उपपत्ति होती है । " काकेभ्यो दधिरक्ष्यताम् " इस स्थलमें जो काक पदकी दध्युपघातकमें लक्षणा एवं " छत्रिणोयान्ति " इस स्थलमें जो छत्रिपदकी छत्रि सार्थवाहीमें लक्षणा है वह क्रम से काकपद शक्यार्थ काक वृत्ति दध्युपघातकत्वावच्छिन्नमें एवं छत्रिपद शक्यार्थ छत्रि वृत्ति छत्रिसार्थवाहित्वावच्छिन्नमें होनेके कारण अजहत् स्वार्थालक्षणा कहलाती है । शक्यार्थ और लक्ष्यार्थ दोनों में वृत्ती धर्म जहां लक्ष्यतावच्छेदक होता है वह लक्षणा अजहत् स्वार्था लक्षणा है यथा—उक्त दोनों स्थलोंमें " दध्युपघातकत्व " एवं " छत्रिसार्थवाहित्व रूप " लक्ष्यतावच्छेदक धर्मको क्रमसे काकपदके शक्यार्थ काकमें और लक्ष्यार्थ विलाड़ आदिमें एवं छत्रिपदके शक्यार्थ छत्रविशिष्टमें और लक्ष्यार्थ छत्रशून्य छत्रिसार्थवाही व्यक्तिमें रहनेके कारण उक्तदोनों स्थलोंमें काकपदकी दध्युपघातकत्वावच्छिन्नमें एवं छत्रिपदकी छत्रिसार्थवाहित्वावच्छिन्नमें लक्षणा अजहत् स्वार्था लक्षणा है ।

(८) यदि चान्वयानुपपत्तिर्लक्षणाबीजं स्यात्तदाक्वचिद्गङ्गापदस्य-तीरे क्वचिद्घोषपदस्य मत्स्यादौ लक्षणेति नियमो न स्यात् ।

(८) तात्पर्यानुपपत्ति ही लक्षणाका बीज है इसमें एक यह भी युक्ति है कि गङ्गामें रहनेवाले मत्स्यके तात्पर्यसे उच्चारण किये गये गङ्गायां घोषः इस वाक्यमें घोष पदकी मत्स्यमें लक्षणा है और गङ्गा पदकी तीरमें लक्षणा नहीं है । एवं तीरनिष्ठ घोषके तात्पर्यसे उच्चारण कियेगये गङ्गायां घोषः इस वाक्यमें गङ्गा पदकी तीरमें लक्षणा है और घोष पदकी मत्स्यमें लक्षणा नहीं है क्योंकि ऐसा माननेसे तात्पर्यकी उपपत्ति नहीं होगी । यदि अन्वयानुपपत्ति लक्षणाका बीज माना जाय तो " गङ्गायां घोषः " इस स्थलमें उक्त नियमकी उपपत्ति नहीं होगी । क्योंकि गङ्गा पदकी तीरमें अथवा घोष पदकी मत्स्यमें लक्षणा माननेही से अन्वयकी उपपत्ति हो जायगी ।

(९) इदं तु बोध्यम् । शक्यार्थसम्बन्धो यदि तीरत्वेन रूपेण गृहीतस्तदा तीरत्वेन तीरबोधः । (१०) यदि तु गङ्गातीरत्वेन रूपेण गृहीतस्तदा तेनैव रूपेण स्मरणम् । (११) अत एव लक्ष्यतावच्छेदके न लक्षणा, तत्प्रकारकबोधस्य तत्र लक्षणां विनाप्युपपत्तेः (१२) परंत्वेवं क्रमेण शक्यतावच्छेदकेऽपि शक्तिर्नस्यात्, तत्प्रकारकशक्यार्थस्मरणं प्रति तत्पदस्य सामर्थ्यमित्यस्य सुवचत्वादिति विभावनीयम् ।

(९,१०) यह समझना चाहिये कि " गङ्गायां घोषः " इस स्थलमें यदि गङ्गापदके शक्यार्थ प्रवाहका सामीप्य सम्बन्ध रूप गङ्गा पदकी लक्षणा तीरत्व रूपसे तीरमें गृहीत होती है अर्थात् " तीरं गङ्गा पद शक्य सम्बन्धि " ऐसा ज्ञान होता है तो गङ्गापदसे तीरत्वेन रूपेण तीरकी उपस्थिति और शाब्दबोध होता है और यदि गङ्गा तीरत्वेन रूपेण तीरमें गृहीत होती है अर्थात् " गङ्गा तीरं गङ्गापद शक्य सम्बन्धि " इत्याकारक ज्ञान होता है तो गङ्गा तीरत्वेन रूपेण तीरकी गङ्गापदसे उपस्थिति और शाब्दबोध होता है इससे पर्यवसित यह हुआ कि तत्प्रकारक उपस्थिति और शाब्दबोध के प्रति तत्प्रकारक लक्षणा ज्ञान भी कारण है (११) अतएव लक्ष्यतावच्छेदकमें लक्षणा नहीं मानने परभी लाक्षणिक पदसे लक्ष्यतावच्छेदक रूपसे लक्ष्यकी उपस्थिति और शाब्दबोधकी उपपत्ति होनेके कारण लक्ष्यतावच्छेदकमें लक्षणा नहीं मानी जाती है । (१२) परंतु यह बात यहां विशेष ध्यान देनेके योग्य है कि इस रीति से शक्यतावच्छेदकमें शक्ति माननेकी भी कोई आवश्यकता नहीं रहेगी । क्योंकि घटत्वादि तत्तत्प्रकारक स्मृति और शाब्दबोधके प्रति घटत्वादि तत्तत्प्रकारक शक्तिज्ञानको कारणत्व माननेहीसे घटादि पदसे घटत्वप्रकारक उपस्थिति और शाब्दबोधकी उपपत्ति होजायगी । तब [illegible] स्वीकार करना [illegible]

(१३) यत्र तु शक्यार्थस्य परम्परासम्बन्धरूपा लक्षणा सा लक्षित-लक्षणेत्युच्यते । (१४) यथा द्विरेफादिपदे रेफद्वय सम्बन्धो भ्रमरपदे ज्ञायते भ्रमरपदस्य च सम्बन्धो भ्रमरे ज्ञायते तत्र लक्षित लक्षणा ।

(१३) जहां शक्यार्थका लक्ष्यार्थमें परम्परा सम्बन्ध अर्थात् सम्बन्धघटित सम्बन्ध होता है वहांकी लक्षणा लक्षित लक्षणा कही जाती है । (१४) जैसे—द्विरेफादि पदका स्वसम्बन्ध रेफद्वयका घटितत्वसम्बन्ध भ्रमर पदमें ज्ञात होता है एवं भ्रमर पदका वाच्यत्व सम्बन्ध भ्रमररूप अर्थमें ज्ञात होता है अतः द्विरेफ पदका स्वशक्य रेफद्वय घटित पद वाच्यत्वरूप परम्परा सम्बन्ध भ्रमरमें रहनेके कारण द्विरेफ पदकी भ्रमरमें लक्षणा लक्षित लक्षणारूपा है ।

2, 3. 11 (१५) किन्तु लाक्षणिकं पदं नानुभावकं लाक्षणिकार्थस्य शाब्दबोधे तु पदान्तरं कारणम्, (१६) शक्ति लक्षणा न्यतरसम्बन्धेनेतरपदार्थान्वितस्व शक्यार्थ शाब्दबोधं प्रति पदानां सामर्थ्यावधारणात् । (१७) वाक्ये तु शक्तेरभावाच्छक्यसम्बन्ध रूपा लक्षणाऽपि नास्ति ।

(१५) मीमांसक लाक्षणिक पदसे शाब्दबोध नहीं मानते हैं अतएव उनके मत में "कुमतिः पशुः" इस वाक्यमें दोनों पदोंको कुत्सितज्ञानविशिष्ट और पशुसदृश रूप अर्थमें लाक्षणिक होने के कारण उक्त वाक्यसे शाब्द बोध नहीं होता है इसलिये तद्विषयक शाब्द बोधके प्रति तद्वाचक पदज्ञानको कारण मानते हैं, परन्तु इसप्रकार कार्य्य कारण भाव माननेसे गङ्गायां घोषः यहांभी तीर वाचकपद ज्ञानको नहीं रहने के कारण तीर विषयक शाब्द बोध नहीं होगा ; इसहेतु उक्त कार्य्य कारण भावको नहीं मानकर । (१६) शक्ति लक्षणान्यतर सम्बन्धद्वारा इतरपदसे उपस्थापित जो अर्थ तदन्वित स्वशक्यार्थ विषयक शाब्दबोधके प्रति ज्ञायमान पद अथवा पदज्ञानको कारणता मानते हैं । तब "गङ्गायां घोषः" इस स्थलमें लक्षणा रूप सम्बन्धसे गङ्गा पदोपस्थापित तीर रूप अर्थसे अन्वित जो घोष पद शक्यार्थ घोष तद्विषयक शाब्दबोधके प्रति घोषपदज्ञान कारण है अतः उक्त स्थलमें शाब्द बोधकी अनुपपत्ति नहीं होती । और "कुमतिः पशुः" इस वाक्यमें एक भी वाचक पद नहीं है अतः स्वशक्यार्थ अप्रसिद्ध हो जाने से शाब्दबोध नहीं होता । (१७) मीमांसक मत सिद्ध वाक्य लक्षणाका खण्डन करते हैं कि वाक्य घटक तत्तत्पदमें शक्ति माननेही से वाक्यार्थ विषयक शाब्द बोध उपपन्न होजाता है इसलिये वाक्यमें शक्ति स्वीकार करना व्यर्थ है अतः वाक्यका शक्यार्थ अप्रसिद्ध होने के कारण वाक्यमें शक्य सम्बन्ध रूप लक्षणा नहीं होती है ।

(१८)यत्र गंभीरायां नद्यां घोष इत्युक्तं तत्र नदी पदस्य नदीतीरे लक्षणा, गंभीर पदार्थस्य नद्या सहाभेदेनान्वयः (१९) क्वचिदेकदेशान्वयस्या-स्वीकृतत्वात् ।

(१८)घटत्वरूप पदार्थैक देशमें नित्यपदार्थका अभेद सम्बन्ध से अन्वय मानकर "नित्यो-घटः" इस प्रयोग में भी प्रामाण्यापत्ति हो जायगी इसलिये "पदार्थः पदार्थे नान्वेति नतु पदार्थैकदेशेन" अर्थात् पदार्थैक देशके साथ पदार्थका अन्वय नहीं होता है किन्तु मुख्य पदार्थही के साथ होता है । यह नियम मानना आवश्यक है । तब यदि वाक्यमें लक्षणा नहीं मानी जायगी तो "गभीरायां नद्यां घोषः" इस स्थल में नदी पदकी नदी तीर में लक्षणा एवं गभीर पदार्थ का नदीतीर रूप नदी पदार्थ के एक देश नदी रूप अर्थ में अन्वय आपको मानना होगा ऐसी स्थिति में "पदार्थः पदार्थे नान्वेति" इत्यादि नियम का भङ्ग होजायगा । और यह इष्ट नहीं है । (१९) इसका उत्तर देते हैं कि "महा कविः" "परम सुन्दरः" इत्यादि स्थल में कवित्व सौन्दर्य्यादि रूप पदार्थैक देश में क्रमशः महत्, परम, पदार्थ का अन्वय होने के कारण "पदार्थः पदार्थे नान्वेति" इत्यादि नियम सार्वत्रिक नहीं है तब "गभीरायां नद्यां घोषः" इस स्थल में भी उक्त नियम को नहीं मानकर अर्थात् एक देशान्वय मानकर नदी पदकी नदी तीर में लक्षणा और नदी पदार्थैक देश नदीरूप अर्थमें गभीर पदार्थ का अन्वय मानने में कोई बाधा नहीं है ।

(२०) यदि तत्रैकदेशान्वयो न स्वीक्रियते तदा नदीपदस्य गभीरनदी-तीरे लक्षणा गभीर पदं तात्पर्यग्राहकम् । (२१) बहुव्रीहावप्येवम् । तत्र हि चित्रगुपदादौ यद्येकदेशान्वयः स्वीक्रियते तदा गोपदस्य गो स्वामिनि लक्षणा गवि चित्राभेदान्वयः । (२२) यदि त्वेकदेशान्वयो न स्वीक्रियते तदा गोपदस्य चित्र गोस्वामिनि लक्षणा चित्रपदं तात्पर्यग्राहकम् ।

(२०) यदि "गभीरायां नद्यां घोषः" इत्यादि स्थल में एक देशान्वय स्वीकार न करें अर्थात् "पदार्थः पदार्थे नान्वेति" इत्यादि नियमको माने तो एकदेशान्वय के भय से नदी पदकी नदी तीर में लक्षणा आप नहीं मान सकते हैं अतः नदी पदकी गभीर नदी तीर में लक्षणा है और गभीर पद केवल तात्पर्य्यग्राहक है अर्थात् (गभीर नदीतीर विषयक बोधेच्छा से नदी पद वक्ता पुरुष से उच्चरित है) इस तात्पर्य्य को समझाता है । (२१)-इसीप्रकार बहुव्रीहि समास में भी समझना चाहिये जैसे "चित्रा गौर्यस्य असौ चित्रगुः" इत्यादि बहुव्रीहि समास में यदि एक देशान्वय का स्वीकार करें अर्थात् उक्त नियम को नहीं मानें तो गोपदकी गोस्वामी में लक्षणा और गो पदार्थैक देश गो रूप अर्थ में चित्र पदार्थ का अभेदान्वय समझना चाहिये । (२२) यदि एकदेशान्वय का स्वीकार नहीं करें तो गोपदकी चित्राभिन्न गो स्वामी में लक्षणा और चित्रपद को तात्पर्य्यग्राहक समझना चाहिये ।

(२३) एवमारूढ़वानरो वृक्ष इत्यत्र वानरपदस्य वानरारोहण कर्तरि लक्षणा । [illegible] तात्पर्यग्राहकम् । [illegible] ग्राह्यम् ।

(२३) इसीप्रकार "आरूढः वानरः यं (वृक्षं) असौ आरूढ वानरो वृक्षः" इत्यादि समासस्थलमें भी वानर पदकी वानर कर्त्तृक आरोहणरूप क्रियाके कर्ममें लक्षणा और आरूढ़-पद तात्पर्य ग्राहक है। इसीप्रकार स्थानान्तर में भी समझना चाहिये।

(२४) तत्पुरुषे तु पूर्वपदे लक्षणा तथाहि। राजपुरुष इत्यादौ राजपदार्थेन सह पुरुषादिपदार्थस्य साक्षान्नान्वयो निपातातिरिक्त नामार्थयो-र्भेदेनान्वय बोधस्या व्युत्पन्नत्वात्। (२५) अन्यथा राजापुरुष इत्यत्रापि तथा-न्वयबोधःस्यात्।

(२४) एवं तत्पुरुष समास में पूर्व पदमें लक्षणा होती है। जैसे राज्ञः पुरुषः राज पुरुषः इत्यादि षष्ठी तत्पुरुष समास में राजपदार्थ के साथ पुरुष पदार्थका साक्षात् भेद अर्थात् अभेदातिरिक्त स्वत्वादि सम्बन्धसे अन्वय नहीं हो सकता क्योंकि यह नियम है कि निपातातिरिक्त नामार्थद्वयका साक्षात् भेद सम्बन्धसे अन्वय नहीं होताहै (२५) अन्यथा (यदि निपातातिरिक्त नामार्थद्वयका भी साक्षात् भेद सम्बन्धसे अन्वय माना जाय तो) राजापुरुषः इस स्थलमें भी स्वत्वादिरूप भेद सम्बधसे अन्वय बोध होने लगेगा इसलिये उक्त नियमका मानना अत्यन्त आवश्यक है

(२६) पटो न घट इत्यादौ घटपटाभ्यां नञः साक्षादेवान्वय न्निपातातिरिक्तेति। (२७) नीलो घट इत्यादौ नमार्थयो रभेदसम्बन्धेनान्वया न्न भेदेनेति।

(२६) "पटो न घटः" इत्यादि स्थल मे घटका प्रतियोगिता सम्बन्धसे नञर्थ भेदमें एवं भेदका अनुयोगिता सम्बन्धसे पटमें अन्वय होने के कारण नियम में निपातातिरिक्तत्व विशेषण दिया गया है नञ् को निपातरूप होने के कारण निपातातिरिक्त नामार्थ में नञर्थ भेदका ग्रहण नहीं होगा अतः नञर्थ भेदमें घटका प्रतियोगिता सम्बन्ध से एवं पटमें भेदका अनुयोगिता सम्बन्ध से अन्वय होनेपर भी नियम में व्यभिचार नहीं होगा (२७) "नीलोघटः" इत्यादि स्थल में नील और घटरूप नामार्थद्वयका अभेद सम्बन्ध से अन्वय होता है अतः नियम में भेद अर्थात् अभेदातिरिक्त सम्बन्धकी विवक्षा की गई है। इस नियम के अनुरोधसे राज पदार्थका पुरुष पदार्थ में स्वत्व सम्बन्धसे अन्वय नहीं हो सकता है।

(२८) न च राजपुरुष इत्यादौ लुप्तविभक्तेः स्मरणं कल्प्य मिति वाच्यम्। अस्मृतविभक्तेरपि ततो बोधोदयात् (२९) तस्माद्राजपदादौ राजसम्बन्धिनि लक्षणा, तस्य च पुरुषेण सहाभेदान्वयः (३०) द्वन्द्वे तु धवखदिरौ छिन्धीत्यादौ धवः खदिरश्च निरूपणार्थं द्वित्वप्रकारेण बुध्यते तत्र न लक्षणा

(२८) "शङ्का"—राजपुरुष इत्यादि स्थल में राजपदोत्तर लुप्त षष्ठी विभक्ति के स्मरण की कल्पना करके राजपदार्थ का षष्ठ्यर्थ स्वत्व में निरूपितत्व सम्बन्ध से एवं स्वत्व का पुरुष में स्वरूपसम्बन्धसे अन्वय द्वारा राज निरूपित स्वत्ववान् पुरुषः इत्याकारक शाब्दबोध राजपुरुष इस समासस्थल में हो ही जायगा फिर राज पदकी राजसम्बन्धी में लक्षणा व्यर्थ है। समा०—जिस पुरुषको विभक्तिका स्मरण नहीं भी हुआ है अर्थात् प्रकृति प्रत्ययानभिज्ञ पुरुषों को भी राजपुरुष इत्यादि समासस्थलमें शाब्दबोध होता है लेकिन अब वह नहीं होगा। (२९) अतः राजपुरुष इत्यादि समासस्थल में राज पदकी राज सम्बन्धीमें लक्षणा मानकर राजसम्बन्धीका पुरुषके साथ अभेदान्वय मानना ही युक्त है। (३०) एवं "धव खदिरौ छिन्धि" इत्यादि इतरेतर योग द्वन्द्व समासमें द्विवचनार्थ द्वित्वप्रकारक धवखदिरविशेष्यक बोध होता है अतःइतरेतर योगद्वन्द्व म लक्षणा माननेकी आवश्यकता नहीं है।

(३१) न च साहित्ये लक्षणेति वाच्यम् साहित्य शून्ययो रपि द्वन्द्व दर्शनात्।

(३१) प्रत्येका वृत्ति धर्ममें समुदायवृत्तित्वका अनुभव नहीं होता अतः द्वित्वादि संख्याको प्रत्येक में वृत्तित्व मानना आवश्यक है, तब घट और आकाश इन दोनों में वर्त्तमान द्वित्वको आकाशमें भी वर्त्तमान होनेके कारण आकाशौ इस वाक्य को प्रामाण्यापत्ति होजायगी तद्वारणार्थ यह नियम माना गया है कि उद्देश्यतावच्छेदक व्याप्य जो संख्या वही सुप् विभक्तिका अर्थ है तब घटाकाशोभयवृत्ति द्वित्व संख्या का आकाशत्वरूप उद्देश्यतावच्छेदक-का व्याप्य नहीं होनेके कारण उस द्वित्वका सुप्, विभक्तिसे बोध नहीं होगा अतः "आकाशौ" इसवाक्य में प्रामाण्यापत्ति नहीं हो सकती है परन्तु उक्त नियम मानने पर "धवखदिरौ" इत्यादि इतरेतर योग द्वन्द्वसमास में खदिर रूप उत्तर पदको धवखदिरोभयनिष्ठ साहित्याश्रयमें लक्षणा मानना युक्त है क्योंकि यदि लक्षणा नहीं मानी जायगी तो "धवखदिरौ" इस वाक्यमें सुबर्थ द्वित्वका उद्देश्यतावच्छेदक अगत्या धवत्व और खदिरत्व को ही मानना होगा। तब एक धव और एक खदिर वृत्ति द्वित्वको धवत्वखदिरत्वात्मक उद्देश्यतावच्छेदक का व्याप्य नहीं होने के कारण एवं धवद्वयनिष्ठ द्वित्वको धवत्वरूप उद्देश्यतावच्छेदक का व्याप्य, और खदिरद्वयनिष्ठ द्वित्वको खदिरत्वरूप उद्देश्यतावच्छेदक का व्याप्य होनेके कारण एक धव और एक खदिर के तात्पर्यसे "धव खदिरौ" यह प्रयोग नहीं होगा और धवद्वय तथा खदिरद्वय के तात्पर्यसे उक्त प्रयोग होने लगेगा इस कारण मीमांसक लोग खदिररूप उत्तर पद की धव खदिरोभयवृत्ति साहित्याश्रयमें लक्षणा मानते हैं। तब उक्त साहित्य हीको सुबर्थ द्वित्वका उद्देश्यतावच्छेदक होनेके कारण उक्त साहित्यरूप उद्देश्यतावच्छेदकका व्याप्यसंख्या एक धव तथा एक खदिर गत द्वित्व होगा न कि धवद्वय वृत्ति एवं खदिरद्वयवृत्ति द्वित्व होगा इसलिये एक धव और एक खदिर के तात्पर्य से "धवखदिरौ" यह प्रयोग होगा और धवद्वय एवं खदिरद्वयके तात्पर्यसे उक्त प्रयोग नहीं होगा। लेकिन इस तरह मीमांसकों का खदिर रूप उत्तर पदकी धव खदिरोभयवृत्ति साहित्याश्रयमें लक्षणा मानना युक्त नहीं है क्योंकि सामानाधिकरण्यरूप साहित्य शून्य विरुद्ध घटत्व तथा पटत्व के तात्पर्य से भी "घटत्व पटत्वेस्तः" इत्यादि स्थलमें द्वन्द्वसमास देखाजाता है।

(३२) नचैक क्रियान्वयित्वरूपं साहित्यमस्तीति वाच्यम्। क्रियाभेदेपि धवखदिरौ पश्य छिन्धीत्यादि दर्शनात् साहित्यस्याननुभवाच्च। (३३) अत एव राजपुरोहितौ सायुज्यकामौ यजेयातामित्यत्र लक्षणा भावाद् द्वन्द्व आश्रीयते तस्मात्साहित्यं नार्थः।

(३२) शङ्का—सामानाधिकरण्यरूप साहित्याश्रयमें लक्षणा नहीं है किन्तु एक क्रियान्वयित्व रूप साहित्याश्रयमे ही लक्षणा मानते हैं अतः घटत्व पटत्वादि रूप विरुद्ध पदार्थोंमे सामानाधिकरण्यात्मक साहित्य नहीं रहने पर भी घटत्व पटत्वेस्तः" इस स्थल में अस् धात्वर्थ रूप एक क्रियान्वयित्वात्मक साहित्य रहनेके कारण द्वन्द्व समासकी अनुपपत्ति नहीं होगी। समा०-धव दर्शन एवं खदिरच्छेदन तात्पर्येण धव खदिरौ पश्य छिन्धि इत्यादि स्थलमें एक क्रियान्वयित्व रूप साहित्य का धव खदिरोभय में वृत्ती नहीं होने परभी उक्त स्थल में द्वन्द्व समास होता है किन्तु अब वह नहीं होगा। एक युक्ति यह भी है कि द्वन्द्व स्थल में साहित्य विषयक बोधका अनुभव भी नहीं होता है अतः साहित्याश्रयमें लक्षणा युक्ति सिद्ध नहीं है। परन्तु साहित्याश्रयमें लक्षणा नहीं मानने वाले नैयायिकोंके मत में एक धव तथा एक खदिरके तात्पर्यसे धव खदिरौ इस वाक्य की अनुपपत्ति और धवद्वय एवं खदिरद्वयके तात्पर्यसे उक्त वाक्य की आपत्तिरूप दोषका वारण नहीं होगा इसका समाधान नैयायिक लोग इस प्रकार करते हैं कि जहां एक धर्म उद्देश्यतावच्छेदक है उसी स्थलमे सुप् विभक्तिको उद्देश्यतावच्छेदक व्याप्य संख्या बोधकत्व का नियम है और नाना धर्म जहां उद्देश्यतावच्छेदक है वहां उक्त नियम नहीं मानते हैं। अतः आकाशत्वरूप एक धर्म को उद्देश्यतावच्छेदकत्व स्थलमें उक्त नियम माननेके कारण "आकाशौ" इस वाक्य को प्रामाण्यापत्ति नहीं होगी एवं धवत्व तथा खदिरत्व रूप नाना धर्म को उद्देश्यतावच्छेदकत्व स्थल में उक्त नियम को नहीं मानने के कारण एक धव तथा एक खदिर के तात्पर्यसे "धव खदिरौ" इस वाक्य की प्रमाणता में कोई बाधा नहीं होगी। (३३) साहित्याश्रयमें लक्षणा नहीं मानने वाले नैयायिकों के मत का पोषक एक यह भी युक्ति है कि "राजपुरोहितौ सायुज्यकामौ यजेयाताम्" इस विधिवाक्यस्थलमें राज्ञः पुरोहितौ राजपुरोहितौ यह षष्ठी तत्पुरुष अथवा राजा च पुरोहितश्च इति राज पुरोहितौ यह द्वन्द्व समास है इस संशय को निराकरण करते हुए पूर्वाचार्योंने कहा है कि षष्ठी तत्पुरुष समास मानने से लक्षणा की कल्पना प्रयुक्त गौरव होगा अतः उक्त विधि वाक्यमें द्वन्द्व समास मानना ही उचित है। किन्तु यदि द्वन्द्व समास में भी लक्षणा मानी जाय तो पूर्व आचार्य्योंका उक्त कथन असंगत हो जायगा। इससे भी यह पर्यवसित हुआ कि उक्त इतरेतर द्वन्द्व समासस्थल मे लक्षणा स्वीकार करना युक्त नहीं है।

(३४) किन्तु वास्तवो भेदो यत्र तत्र द्वन्द्वः न च नीलघटयोरभेद इत्यादौ कथमिति वाच्यम्। तत्र नीलपदस्य नीलत्वे घटपदस्य घटत्वे लक्षणा, अभेद इत्यस्य चाश्रयाभेद इत्यर्थात्। (३५) समाहार द्वन्द्वेतु यदि समाहारोऽप्यनुभूयत इत्युच्यते तदा अहिनकुलमित्यादौ परपदे अहिनकुलसमाहारे लक्षणा पूर्वपदं तु तात्पर्यग्राहकम्।

(३४) परन्तु यदि आप ऐसा कहें कि कर्मधारय समास के समान द्वन्द्व समास में भी यदि लक्षणा नहीं मानी जायगी तो कर्मधारय से द्वन्द्व में भेद नहीं होगा। इसका उत्तर ग्रन्थकार इस प्रकार देते हैं कि समस्य मान दोनों पदों के अर्थों में जहां परस्पर वास्तविक भेद रहता है उसको द्वन्द्व समास कहते हैं और जहां भेद नहीं रहता है उसको कर्मधारय समास कहते हैं।

शङ्का—यदि समस्य मान दोनों पदार्थों में परस्पर भेदही लक्षणा का बीज होतो "नील घटयो रभेदः" इस स्थलमें नील और घट इन दोनों पदार्थों में परस्पर भेद नहीं रहने के कारण द्वन्द्व समास किस प्रकार होगा? समा०—नील और घट पदके क्रमसे नीलत्व और घटत्व रूप अर्थमें लक्षणा है अतः उन दोनोंमें परस्पर भेद रहनेके कारण द्वन्द्व समासकी अनुपपत्ति नहीं होगी और तद्वाक्य घटक अभेद पदका आश्रयभेद अर्थ है अतः अर्थ में भी बाधा नहीं होगी जिस हेतु नीलत्व और घटत्व के आश्रयमे अभेद है ऐसा अर्थ हुआ। (३५) "अहिनकुलम्" इत्यादि समाहार द्वन्द्व मे यदि अहिनकुल समुदायत्व रूप समाहार के बोध काभी अनुभव होतो नकुलरूप उत्तर पदकी अहिनकुल समाहार में लक्षणा मानकर अहिरूप पूर्व पदमें तात्पर्य ग्राहकत्व मानना आवश्यक है।

(३६) न च भेरीमृदङ्गं वादयेत्यत्र कथं समाहारस्यान्वयः, अपेक्षाबुद्धि विशेषरूपस्य तस्य वादनासम्भवादिति वाच्यम्। परम्परासम्बन्धेन तदन्वयात्।

(३६) शङ्का—समाहार द्वन्द्वमें यदि पर पदकी समुदायत्वरूप समाहार में लक्षणा मानी जाय तो "भेरीमृदङ्गम्वादय" इस स्थलमें शब्दजनक संयोगानुकूल व्यापार रूप वादन क्रियाकी कर्मतारूप द्वितीयार्थ में समुदायत्व रूप प्रकृत्यर्थ समाहार का अन्वय किस प्रकार हो सकता है? समा०—वादन क्रियाकी कर्मता समुदायत्व निष्ठ नहीं होनेके कारण उक्त कर्मता में समुदायत्वरूप प्रकृत्यर्थका निष्ठत्व सम्बन्ध से अन्वय नहीं करके परम्परा अर्थात् सामानाधिकरण्य सम्बन्धसे अन्वय करते हैं। अतः भेरीमृदङ्गनिष्ठ उक्त कर्मतामें तन्निष्ठ समुदायत्व को सामानाधिकरण्य सम्बन्ध से रहने के कारण अन्वयबोधकी बाधा नहीं होगी।

(३७) एवं पञ्चमूलीत्यादावपि। एतेनाहिनकुल मित्यादावहिर्नकुलश्च बुध्यते प्रत्येक मेकत्वान्वयः, समाहारसंज्ञा च यत्रैकत्वं नपुंसकत्वं च प्राणितूर्येत्यादिसूत्रेणोक्तं तत्रैव, अन्यत्रैकवचनमसाध्वित्याहुः।

(३७) जैसे "अहिनकुलम्" इत्यादि स्थल में नकुल पदकी अहिनकुल समाहारमें लक्षणा और अहि पदमें तात्पर्यग्राहकत्व माना गया है इसी प्रकार पञ्चानां मूलानां समाहारः पञ्चमूली इत्यादि स्थलमें भी मूल पदकी पञ्चमूल समाहारमें लक्षणा और पञ्चरूप पूर्व पदमें तात्पर्यग्राहकत्व माना जाता है। नवीन नैयायिकों का मत है कि अहिनकुलम् इत्यादि समाहार द्वन्द्व स्थलमें अहिनकुल समुदायत्व का बोध नहीं होता है किन्तु एक वचनार्थ एकत्वप्रकारक अहि नकुल प्रत्येक विशेष्यक बोधमात्रका अनुभव होता है। इसलिये वहां नकुल पदको अहि नकुल समुदायत्व में लक्षणा और पूर्व पदमें तात्पर्यग्राहकत्व मानना व्यर्थ है। "द्वन्द्वश्च प्राणितूर्य सेनाङ्गानाम्" "सनपुंसकम्" इन पाणिनीय सूत्रोंसे क्रमिक जहां पद साधुत्वार्थ एक वचनान्तत्व और नपुंसकत्वका विधान किया गया है वह समाहार द्वन्द्व कहाजाता है समाहार शब्द परिभाषिक मात्र है। समाहारका अन्वयबोध नहीं होता है। समाहार संज्ञाका प्रयोजन यह है कि समाहारातिरिक्त अर्थात इतरेतर द्वन्द्व स्थल में एकवचन विभक्ति असाधु है।

(३८) पितरौश्वशुरावित्यादौ पितृपदे जनक दम्पत्योः श्वशुरपदे स्त्रीजनक दम्पत्योर्लक्षणा। एवमन्यत्रापि (३९) घटा इत्यादौ तु न लक्षणा, घटत्वेन रूपेण नानाघटोपस्थिति सम्भवात्।

(३८) "माता च पिता च पितरौ" इस एक शेषस्थलमें मातृ पदके लोप होनेके कारण उक्त स्थलमें पितृ पदकी जनक दम्पती में और श्वश्रूश्च श्वशुरश्च श्वशुरौ इस एक शेषस्थलमें श्वश्रू पदके लोप होने के कारण श्वशुर पदकी स्त्रीके जनक दम्पती में लक्षणा है। इसी प्रकार "पुमानुस्त्रिया" इत्यादि पाणिनीय सूत्रसे जहां एक शेषका विधान किया गया है उन एक शेषस्थलों में भी लक्षणा समझनी चाहिये। (३९) किन्तु घट पद की शक्तिके ज्ञानसे घटत्वेन रूपेण उपस्थित सकल घटोंमें बहुवचनार्थ बहुत्वका भान होनेमें कोई बाधा नहीं रहने के कारण घटश्च घटश्च घटश्च इति घटाः इत्यादि एक शेषस्थलमें घट पदकी घट समुदायमें लक्षणा नहीं है।

(४०) कर्मधारयस्थले तु नीलोत्पलमित्यादावभेदसम्बन्धेन नाल पदार्थ उत्पलपदार्थे प्रकारः तत्र च न लक्षणा, अतएव निषादस्थपतिं याजयेदित्यत्र न तत्पुरुषो लक्षणापत्तेः किन्तु कर्मधारयो लक्षणाभावात्।

(४०) एवम् नीलं च तत् उत्पलं नीलोत्पलम् इत्यादि कर्मधारय स्थलमें अभेद सम्बन्धसे नील प्रकारक उत्पल विशेष्यक बोधमें कोई बाधा नहीं होने के कारण लक्षणा मानने की आवश्यकता नहीं है। अतएव "निषादस्थपतिं याजयेत्" इस विधि वाक्य में निषादस्थपति, पदमें निषादानां स्थपतिः निषादस्थपतिः इत्याकारक षष्ठी तत्पुरुष समास मानने से निषादरूप पूर्व पदकी निषाद सम्बन्धीमे लक्षणा की कल्पना से होने वाले गौरव के भयसे निषादश्चासौस्थपतिः निषादस्थपतिः ऐसा कर्मधारय समासही मानना युक्त है। क्योंकि कर्मधारयमें लक्षणा नहीं होने के कारण लक्षणाकी कल्पना से होनेवाला गौरव नहीं होगा। यह जो पूर्व आचार्यों का कथन है वह भी कर्मधारयमें लक्षणा नहीं मानने पर असङ्गत नहीं होता।

(४१) न च निषादस्य सङ्कर जाति विशेषस्य वेदानधिकाराद्याजनासंभव इति वाच्यम्, निषादस्य विद्या प्रयुक्तेस्तत एवकल्पनात्।

(४१) शङ्का—यदि आप कहें कि निषाद सङ्कर जाति विशेष है "शूद्र वद् वर्णसङ्कराः" इस वचनसे उसमें भी शूद्र तुल्यत्व सिद्ध होने से "नस्त्री शूद्रौ वेदमधीयाताम्" इस वचन के अनुसार उक्त निषादरूप स्थपति (राजा) को वेद मन्त्र पढ़नेका अधिकार नहीं रहने के कारण वह यज्ञ किस प्रकार कर सकेगा ?

समा० उक्त श्रुति से बोधित निषाद कर्तृक यजन की अनुपपत्तिके भयसे निषादरूप सङ्कर जाति विशेषमें यागोपयुक्त वेद मन्त्र का पठनाधिकार की कल्पना करते हैं।

(४२) लाघवेन मुख्यार्थस्यान्वये तदनुपपत्त्या कल्पनायाः फलमुख-गौरवतयाऽदोषत्वादिति

(४२) यदि आप कहें कि निषादरूप सङ्कर जाति विशेषमें वेद मन्त्र के अध्ययनाधिकार की कल्पना करने से आपके मतमें भी गौरव होगा तो इसके उत्तर में हम यह कह सकते हैं कि उक्त विधि वाक्य में आये हुए "निषादस्थपति" रूप समस्त पदमें लक्षणा की कल्पना न करने से होने वाले लाघव के अनुरोधसे कर्मधारय पक्ष का अवलम्बन सिद्ध होने के बाद ही उक्त सङ्कर जाति विशेषमें वेदाधिकारित्व की कल्पना करनी पड़ती है अतएव यह गौरव फलमुख होने के कारण दोषाधायक नहीं होगा।

(४३) उपकुम्भमर्धपिप्पलीत्यादौ परपदे तत्सम्बन्धिनि लक्षणा पूर्वपदार्थ-प्रधानतया चान्वयबोध इति (४४) इत्थं च समासे न क्वापि शक्तिः पदशक्त्यैव निर्वाहादिति।

(४३) "कुम्भस्यसमीपम् उपकुम्भम्" इत्यादि अव्ययीभाव समासमें कुम्भरूप उत्तर पदकी कुम्भ सम्बन्धी में लक्षणा और उसका उप रूप पूर्व पदार्थ समीप के साथ अभेदान्वय होने के कारण "कुम्भ सम्बन्ध्यभिन्नं समीपम्" ऐसा पूर्व पदार्थ विशेष्यक बोध होता है एवम् अर्धं पिप्पल्याः अर्धं पिप्पली इत्यादि तत्पुरुष समासमे भी पिप्पली रूप पर पदकी पिप्पली सम्बन्धीमें लक्षणा और उसका अर्ध रूप पूर्व पदार्थ के साथ अभेदान्वय होने के कारण पिप्पली सम्बन्ध्य भिन्नम् अर्धम् इत्याकारक पूर्व पदार्थ विशेष्यक बोध होता है। (४४) समासमें वैयाकरण जो शक्ति मानते हैं उसका पूर्वोक्त रीतिसे खण्डन होता है। समासघटक तत्तत्पद की शक्ति वा लक्षणा माननेही से बोधयितव्य अर्थका बोध होजाता है अतः न्याय मतसे समास में शक्ति नहीं मानी जाती है।

का०८२,८३ पूर्वा०

आसत्ति र्योग्यताकाङ्क्षा तात्पर्यज्ञानमिष्यते ॥
कारणं सन्निधानं तु पदस्यासत्तिरुच्यते ।

का० अर्थ।

आसत्ति ज्ञान योग्यता ज्ञान आकाङ्क्षाज्ञान और तात्पर्यज्ञान ये शाब्दबोध के प्रति कारण है। पदोंके परस्पर सान्निध्यको आसत्ति कहते हैं (कारिकामें आसत्ति पद आसत्ति ज्ञानार्थक है)।

(१) आसत्तिरित्यादि। आसत्तिज्ञानं योग्यताज्ञान माकांक्षाज्ञानं तात्पर्य ज्ञानं च शाब्दबोधे कारणम् ॥ (२) तत्रासत्तिपदार्थमाह, सन्निधानं त्विति।

(१) कारिकार्थ मे स्पष्ट है, (२) शाब्दबोध कारण ज्ञानके विषय आसत्ति पदार्थ का निरूपण "सन्निधानन्तु,' इत्यादि ग्रन्थसे करते हैं।

(३)यत्पदार्थस्य यत्पदार्थे नान्वयोऽपेक्षितस्तयो रव्यवधानेनोपस्थितिःकारणम् । (४) तेन 'गिरिर्भुक्तमग्निमान् देवदत्तेन' इत्यादौ न शाब्दबोधः । (५) नीलो घटो द्रव्यं पटः, इत्यादावासत्तिभ्रमाच्छाब्दबोधः । आसत्तिभ्रमाच्छाब्द भ्रमाभावेऽपि न क्षतिः ।

(३) जिस पदार्थका जिस पदार्थ के साथ अन्वय वक्ताके तात्पर्यका विषय हो उन पदों का अव्यवधान अर्थात् परस्पर सान्निध्य आसत्ति पदार्थ है और उसका ज्ञान शाब्दबोधमें कारण है। (४) अतः "गिरिःअग्निमान्" " भुक्तं देवदत्तेन" इस तात्पर्य से जहां "गिरिर्भुक्तमग्निमान्देवदत्तेन" यह वाक्य कहा गया है। वहां गिरि पदार्थ का अग्निमत् पदार्थ के साथ एवं भुक्त पदार्थका देवदत्त पदार्थ के साथ अन्वय तात्पर्यका विषय है। और गिरि पदका अग्निमत् पदमें एवं भुक्त पदका देवदत्त पदमें अव्यवधान नहीं है इस कारण शाब्द बोध नहीं होता है। (५) "नीलःपटः" "द्रव्यं घटः" इस तात्पर्य से जहां नीलो घटो द्रव्यं पटः इस वाक्य का प्रयोग किया गया है वहां नील पदार्थ और घट पदार्थ का अन्वय वक्ता के तात्पर्यका विषय नहीं है इस कारण नील पद और घट पदमें परस्पर अव्यवधान रहने परभी आसत्ति नहीं रह सकती है तब जो उक्त स्थलमें "नीलो घटः" इत्याकारक शाब्द बोध होता है वह भ्रमात्मक आसत्ति ज्ञानही से मानना होगा और उस घट में नील रूप रहने के कारण उक्त शाब्द बोध प्रमात्मकही है अतः भ्रमात्मक आसत्तिज्ञान से प्रमात्मक शाब्द बोध नहीं हो सकता यह प्राचीनों [illegible] सङ्गत नहीं है।

(६) ननु यत्र 'छत्री कुण्डली वासस्वी देवदत्तः, इत्युक्तं तत्रोत्तरपद स्मरणेन पूर्व पद स्मरणस्य नाशादव्यवधानेन तत्तत्पदस्मरणासम्भव इति चेन्न (७) प्रत्येक पदानुभव जन्य संस्कारै श्चरमस्य तावत्पद विषयक स्मरणस्याव्यवधानेनोत्पत्तेः । (८)नाना सन्निकर्षै रेकप्रत्यक्षस्येव नानासंस्कारै रेकस्मरणोत्पत्तेरपि सम्भवात् । (९) तावत्पद संस्कार सहितचरमवर्ण ज्ञानस्योद्बोधकत्वात् ।

(६) शङ्का—योग्य विभु विशेष गुण का नाश स्वोत्तरवर्त्ति गुण से अवश्य होने के कारण छत्री कुण्डली वासस्वी देवदत्तः इस वाक्य स्थलमें छत्री पदके ज्ञान का नाश कुण्डली पदके ज्ञानसे एवं कुण्डली पदके ज्ञानका नाश वासस्वी पदके ज्ञानसे हो जायगा तब छत्री पदज्ञानाव्यवधानेन एवं कुण्डलीपदज्ञानाव्यवधानेन देवदत्त पदज्ञान रूप आसत्ति ज्ञान नहीं रहने के कारण उक्त वाक्य से देवदत्त पदार्थके साथ छत्री और कुण्डली पदार्थका अन्वय बोध किस प्रकार होगा ? * (७-९) समा० — घट और चक्षु का संयोग एवं पट और चक्षुका संयोग इन दोनों से जिस प्रकार घट पट विषयक समूहालम्बन प्रत्यक्ष होता है उसी प्रकार छत्री कुण्डली वासस्वी देवदत्तः इस स्थान में प्रत्येक पदके अनुभव से उत्पन्न नाना संस्कार के सहित देवदत्त पद घटक चरम वर्णज्ञानरूप उद्बोधक से उसके अव्यवहितोत्तर क्षणमें छत्री इत्यादि सकल पदोंका जो समूहालम्बन स्मरण होगा वह छत्री कुण्डली एवं देवदत्त पद विषयक भी है। अतः छत्री कुण्डली पद विषयक उक्त समूहालम्बन और देवदत्त पद विषयक उक्त समूहालम्बन को एक होने के कारण किसी से व्यवधान नहीं हो सकता अतः छत्री पद ज्ञाना व्यवधानेन एवं कुण्डली पद ज्ञानाव्यवधानेन देवदत्तपद ज्ञानरूप आसत्तिज्ञान होने के कारण छत्री कुण्डली वासस्वी देवदत्तः, इस वाक्य स्थल में उक्त शाब्दबोध की अनुपपत्ति नहीं होगी।

(१०) कथमन्यथा नाना वर्णै रेकपदस्मरणम् ।

‡ (१०) यदि नाना संस्कार सहित चरमवर्ण ज्ञान से समूहालम्बन स्मरण की उत्पत्ति न मानी जाय तो घटादि पद घटक उत्तरोत्तर वर्ण ज्ञान से पूर्व पूर्व वर्ण ज्ञानको नष्ट हो जाने के कारण (तत्तद्वर्ण पूर्वा परी भावापन्न वर्ण समुदायात्मक) घटादि पद का ज्ञान भी न हो सकेगा। अतः आपको भी तत्तत्पद घटक तत्तद्वर्णानुभवजन्य नाना संस्कार सहित चरम वर्णज्ञान रूप उद्बोधक से तत्तत्पद घटक सकल वर्ण विषयक समूहालम्बन स्मरण रूप ही पद का ज्ञान मानना होगा ।

---

* "तावत्पद संस्कार सहित चरम वर्णज्ञानस्योद्बोधकत्वात्" ,इस मुक्तावलीकी पंक्तिमें तावत्पद संस्कार सहितत्व चरमवर्ण ज्ञानका उपलक्षण मात्र है इस हेतु चरम वर्णज्ञान मात्रमें उद्बोधकत्व सिद्ध हुआ।

‡ "कथ मन्यथा नानावर्णै रेक पदस्मरणम्" इस पंक्तिमें नानावर्ण शब्दका तत्तद्वर्ण विषयक नाना संस्कार अर्थ है।

(११)परन्तु तावत्पदार्थानां स्मरणादेकदैव खले कपोतन्यायात् तावत्पदार्थानां क्रियाकर्म भावेनान्वयबोधरूपः शाब्दबोधो भवतीति केचित् । (१२) वृद्धा युवानः शिशवः कपोताः खले यथाऽमी युगपत् पतन्ति तथैव सर्वे युगपत् पदार्थाः परस्परेणान्वयिनो भवन्ति ।

(११) पद ज्ञान के समान आशुतर विनाशी क्रमिक पदार्थोपस्थिति का भी मेल नहीं होने के कारण सभी शाब्दबोध में तत्तत्पदार्थानुभव जन्य नाना संस्कार सहित चरम पदार्थ ज्ञान रूप उद्बोधक से उत्पन्न होनेवाली समूहालम्बन स्मरणात्मक पदार्थोपस्थिति ही को कारणत्व मानना होगा। अतः शाब्दबोध से पूर्व युगपत् (एकसाथ) सकल पदार्थों पस्थिति रहने के कारण सभी शाब्द बोध "विशेष्ये विशेषणम्" तत्रापि विशेषणान्तरम् । इस न्याय ही से होगा किन्तु "विशिष्ट वैशिष्ट्यावगाही" नहीं होगा । क्योंकि विशिष्ट वैशिष्ट्यावगाहि बोध के प्रति विशेषणतावच्छेदक प्रकारक निश्चय कारण है जो उक्त शाब्दबोध के पूर्व में नहीं है यह जो प्राचीन आचार्यों का मत है वह "परन्तु" इत्यादि ग्रन्थ से कहा जाता है। सकल पदार्थों का युगपत् स्मरण रहने के कारण खले कपोतन्याय के अनुसार सकल पदार्थों का क्रिया कारक भावसे शाब्दबोध होता है। (१२) इसमें उदयनाचार्यकी सम्मति दिखलाते हैं कि जिस प्रकार वृद्ध युवा और शिशु कपोत एकही समय में खरिहान में आ वैठते हैं उसी प्रकार युगपत् उपस्थित सभी पदार्थ परस्पर अन्वय को प्राप्त करते हैं ।

(१३) अपरेतु यद्यदाकांक्षितं योग्यं सन्निधानं प्रपद्यते । तेन तेनान्वितः स्वार्थः पदैरेवावगम्यते,(१४)तथा च खण्डवाक्यार्थबोधानन्तरं तथैव पदार्थस्मृत्या महावाक्यार्थबोध इत्यप्याहुः ।

(१३ १४) नवीन अपने वक्ष्यमाण सिद्धान्त में प्रामाणिकत्व सूचित करने के लिये प्रथमतः प्रशस्त पादाचार्य की सम्मति "यद्यदा कांक्षितम्" इत्यादि ग्रन्थसे कहते हैं। जो २ पद परस्पर आकांक्षा योग्यता तथा सन्निधि मत्त्वेन ज्ञात होते हैं। तत्तत्पदार्थसे अन्वित जो स्वार्थ वह पदोंसे प्रथमतः ज्ञात होता है और तदनन्तर महा वाक्यार्थ बोध होता है। ऐसा स्वीकार करने से पूर्वोक्त समूहालम्बन रूप तत्तत्पदार्थ स्मरण के विना भी शाब्द बोध का निर्वाह होगा। शङ्का—यदि आप कहें कि "घटमानय" इत्यादि स्थल में लोट् रूप चरम पदके अर्थकी स्मृति कालमें घट पदार्थ स्मरणको नष्ट हो जाने के कारण तत्तत्पदार्थ विषयक समूहालम्बन स्मरण की कल्पना आवश्यक है समा०—चरम पदार्थस्मृति कालमें घट स्मरण को नष्ट हो जाने पर भी "घटनिष्ठ कर्मत्वम्" इत्याकारक खण्ड वाक्यार्थ विषयक शाब्दबोध ही को पदजन्य पदार्थोपस्थिति रूप होने के कारण उसीसे "घटनिष्ठ कर्मता निरूपका नयनं कार्यम्" इत्याकारक महा वाक्यार्थ बोधका निर्वाह होगा। नवीन के मतमें खण्ड वाक्यार्थ बोध के बिना महावाक्यार्थ बोध नहीं होता है अतएव सभी महावाक्यार्थ बोध से पूर्व तत्तत् खण्ड वाक्यार्थ बोधरूप विशेषणतावच्छेदक प्रकारक निश्चयको रहने के हेतु

सभी महावाक्यार्थ बोध विशिष्ट वैशिष्ट्यावगाही रूप होते हैं। जहां खण्ड वाक्यार्थ बोध के नाश होने के बाद महावाक्यार्थ बोध उत्पन्न होता है वहां भी खण्ड वाक्यार्थ बोध समाना कारक जो खण्ड वाक्यार्थ विषयक स्मरण उसकी कल्पना करके विशिष्ट वैशिष्ट्यावगाही महा वाक्यार्थ बोध का निर्वाह होता है ऐसा नवीन कहते हैं। परन्तु यहा यह समझना चाहिये कि "घटमानय" इत्यादि स्थल में जहां 'घटनिष्ठं कर्मत्वम्' इत्यादि खण्ड वाक्यार्थ बोध के अव्यवहितक्षणमें लोट् रूप चरम पदका स्मरण हुआ है और उसके अग्रिम क्षणमें कार्यत्व रूप लोट् के अर्थ का स्मरण हुआ है वहां तृतीय क्षणमें घटनिष्ठं कर्मत्वं इत्याकारक खण्ड वाक्यार्थ बोध का नाश हो जाने के कारण उक्त महावाक्यार्थ बोध की उपपत्ति के लिये तत्तत्पदार्थ विषयक समूहालम्बन स्मरण की कल्पना आवश्यक हो जायगी। एवं प्रत्यक्ष ज्ञान जिस प्रकार विशिष्ट वैशिष्ट्यावगाही और विशेष्ये विशेषणं तत्रापि विशेषणान्तरम् इस रीति से भी माना जाता है उसी प्रकार जहां विशिष्ट वैशिष्ट्यावगाही बोध की विशेषणतावच्छेदक प्रकारक निश्चयादि रूप सामग्री नहीं है वहां विशेष्ये विशेषणम् तत्रापि विशेषणान्तरम् इस रीति से ही शाब्दबोध मानना उचित है और जहां विशिष्ट वैशिष्ट्यावगाही बोध की विशेषणतावच्छेदक प्रकारक निश्चयादि रूप सामग्री है वहां विशिष्ट वैशिष्ट्यावगाही शाब्दबोध मानना उचित है ।

(१५) एतेन तावद्वर्णाभिव्यङ्ग्यः पदस्फोटोपि निरस्तः (१६) तत्तद्वर्ण संस्कार सहित चरमवर्णोपलम्भेन तद्व्यञ्जके नैवोपपत्तेरिति ।

(१५,१६)'एतेन' इत्यादि ग्रन्थ से वैयाकरण मत सिद्ध स्फोट का खण्डन किया जाता है। वैयाकरण कहते हैं कि पूर्वापरी भावापन्न तत्तद्वर्ण समुदायात्मक घटादि पदों को एक क्षण में नहीं रहने के कारण अर्थोपस्थापकता नहीं हो सकती है। अतः स्फोट मानना आवश्यक है और वह स्फोट अर्थ का उपस्थापक होने के कारण "स्फुटति ज्ञायते अर्थः अस्मात्" इस व्युत्पत्ति से स्फोट पद व्यवहारका विषय है। और वह ब्रह्म रूप है, किन्तु अतिरिक्त पदार्थ रूप नहीं है। अतः अतिरिक्त पदार्थ की कल्पना प्रयुक्त गौरव भी नहीं होगा यदि कोई शङ्का करे कि स्फोट ब्रह्म रूप होने के हेतु एकही होगा तब तो उसी को सकल पदार्थोपस्थापकता मानने के कारण घट पदोच्चारण के अनन्तर पटादि की उपस्थिति क्यों नहीं होगी। तो इसका समाधान यह है कि पद स्फोट का अभिव्यञ्जक है और पद से अभिव्यक्त होकर स्फोट अर्थ का उपस्थापक होता है अतः घट पद से अभिव्यज्यमान स्फोट में घटोपस्थापकता एवं पट पद से अभिव्यज्यमान स्फोट में पटोपस्थापकता मानते हैं अतः उक्तदोष नहीं होगा। एवं पदसे अभिव्यज्यमान स्फोट पद स्फोट शब्द से, और वाक्य से अभिव्यज्यमान स्फोट वाक्य स्फोट शब्द से कहा जाता है। इस मत का खण्डन नैयायिक इस प्रकार करते हैं कि आपके कथनानुसार पूर्वापरी भावापन्न तत्तद्वर्ण समुदायात्मक पद को किसी एक क्षण में नहीं रहने के कारण स्फोटका अभिव्यञ्जकत्व किस प्रकार होगा ? यदि आप कहें कि अभिव्यञ्जकत्व अभिव्यञ्जक ज्ञान विषयत्व रूप है अतः पद घटक तत्तद्वर्णानुभव जन्य संस्कार

सहित चरमवर्णज्ञानरूप उद्बोधक से जन्य जो पदघटक तावद्वर्ण विषयक समूहालम्बन स्मरण रूप अभिव्यञ्जक ज्ञान तद् विषयत्वात्मक स्फोटाभिव्यञ्जकत्व पूर्वापरी भावापन्न वर्ण समुदाय रूप पदमें हो सकता है तो इसी प्रकार मैं भी कहूंगा कि पद में अर्थोपस्थापकत्व अर्थोपस्थापक ज्ञान विषयत्व रूप है और उक्त रीति से अर्थोपस्थापक उक्त समूहालम्बन स्मरण विषयत्व पदमें रह सकता है तव अर्थोपस्थित्यर्थ स्फोट की कल्पना व्यर्थ है।

(१७) इदंतु बोध्यम्। यत्र द्वारमित्युक्तं तत्र पिधेहीति पदस्य ज्ञानादेव बोधो नतु पिधानादि रूपार्थज्ञानात्, (१८) पदजन्य पदार्थोपस्थितेस्तत्तच्छाब्द बोधे हेतुत्वात्। (१९) किंच क्रियाकर्म पदानांतेनतेनैवसह साकांक्षत्वात् (२०) तेन क्रियापदं विना कथं शाब्दबोधः स्यात्।

(१७ १८) "इदं तु बोध्यम्" इत्यादि ग्रन्थ से प्रभाकर के मतका नैयायिक खण्डन करते हैं। प्रभाकर का मत है कि तत्पदार्थ विषयक शाब्द बोध के प्रति पदजन्य तत्पदार्थो पस्थितित्वेन कारणता माननेमें गौरव है। अतः लाघवात् केवल तत्पदार्थोपस्थितित्वेनैव कारणता मानना उचित है तव वाक्यघटक एक पदका ज्ञान जहां नहीं है वहां तत्पद स्मरणात्मक तत्पदाध्याहार की कल्पना करके तत्पदार्थ स्मृतिद्वारा शाब्दबोध मानने में गौरव होगा। अतः तत्पदार्थ स्मरणात्मक तत्पदार्थाध्याहार ही की कल्पना समुचित है। इसका खण्डन नैयायिक इस प्रकार करते हैं कि यदि तद्विषयक शाब्दबोध के प्रति केवल तत्पदार्थ विषयक उपस्थितित्वेनैव कारणता मानेंगे तो जहां कोकिल रूप अर्थ में पिक पद की शक्ति का ज्ञान नहीं है और पिको रौति इत्याकारक पद ज्ञान है एवं कोकिल का प्रत्यक्ष है। वहां पिक पद से कोकिल का शाब्दबोध नहीं होता है। लेकिन अब प्रत्यक्षात्मक पिक पदार्थ की उपस्थिति और पिक पद ज्ञानादि रूप शाब्दबोध की सामग्री को रहने के कारण क्यों नहीं होगा? इस आपत्ति के भयसे गौरव रहने पर भी पदजन्य पदार्थोपस्थितित्वेनैव शाब्द बोध के प्रति कारणता मानना उचित है। अतः जहां पर "द्वारम्" इतनाही कहा गया है किन्तु "पिधेहि" पद का उच्चारण नहीं किया गया है वहां यदि "पिधेहि" रूप पदाध्याहार की कल्पना नहीं कर के पिधानादि रूप अर्थाध्याहार की कल्पना की जाय तो तद्विषयक शाब्दबोध के प्रति पद जन्य तत्पदार्थोपस्थिति रूप कारण नहीं रहने के हेतु शाब्द बोध नहीं होगा। (१९ २०) पदाध्याहार में एक और भी युक्ति है कि क्रिया और कर्म वाचक पदमें परस्पर आकांक्षा रहती है और आकांक्षाज्ञान शाब्दबोध में कारण है तब यदि "पिधेहि" रूप क्रिया पदका अध्याहार नहीं करेंगे तो आकांक्षा ज्ञान नहीं रहने के कारण शाब्दबोध कैसे होगा।

(२१) तथा पुष्पेभ्य इत्यादौस्पृहयतीति पदाध्याहारं विना चतुर्थ्यनुपपत्तेः पदाध्याहार आवश्यकः।

(२१) एवं जहां "पुष्पेभ्यः" इतनाही कहा गया है किन्तु स्पृहयति पद का उच्चारण नहीं किया गया है वहां यदि "स्पृहयति" पद का अध्याहार नहीं माना जायगा तो स्पृह धातु के योग नहीं रहने के कारण "स्पृहेरीप्सितः" इस पाणिनीय सूत्रसे पुष्प पदोत्तर चतुर्थी विभक्ति नहीं होगी। एतदर्थ भी पदका अध्याहार आवश्यक है।

योग्यतां निर्वक्ति, पदार्थ इत्यादिना—

पदार्थ इत्यादि कारिका से योग्यता का निरूपण करते हैं।

का०८३ उत्त०

पदार्थे तत्र तद्वत्ता योग्यता परिकीर्तिता॥

का० अर्थ।

प्रकृत वाक्य घटक एक पदार्थ में अपर पदार्थ के सम्बन्ध को योग्यता कहते हैं।

(१) एकपदार्थेऽपरपदार्थ सम्बन्धो योग्यतेत्यर्थः। तज्ज्ञानाभावाच्च 'वह्निना सिञ्चति, इत्यादौ न शाब्दबोधः।

(१) सिञ्चन में वह्नि करणत्व रूप तृतीयान्तार्थ का निरूपकत्व सम्बन्ध नहीं रहने के कारण षिच् धात्वर्थ में वन्हि करणत्व की योग्यता नहीं है किन्तु जल ही से सिञ्चन होने के कारण षिच् धात्वर्थ में जल करणत्व ही की योग्यता रहेगी अतः "वह्निना सिञ्चति" इत्यादि स्थल में उक्त योग्यता ज्ञान के नहीं रहने के कारण शाब्दबोध नहीं होता है।

(२) नन्वेतस्या योग्यताया ज्ञानं शाब्दबोधात्प्राक् सर्वत्र न सम्भवति वाक्यार्थस्यापूर्वत्वादिति चेन्न तत्तत्पदार्थ स्मरणे सति क्वचित्संशय रूपस्य क्वचिन्निश्चय रूपस्यापि योग्यताया ज्ञानस्य सम्भवात्।

(२) शङ्का—शाब्दबोध से पूर्व वाक्यार्थ को अनिश्चित रहने के कारण एक पदार्थ में अपर पदार्थ सम्बन्ध रूप योग्यता का ज्ञान नियमतः शाब्दबोध से पूर्व नहीं रहेगा तव वह कारण किस प्रकार हो सकता है? समा० बुबोधयिषया वाक्योच्चारण में वाक्यार्थ ज्ञान कारण है अतः वाक्यार्थ ज्ञान के विना बुबोधयिषासे वाक्य प्रयोग नहीं हो सकता है इसलिये वाक्य प्रयोग कारणी भूत प्रत्यक्षादि रूप वाक्यार्थ ज्ञान शाब्दबोध से पूर्व वक्ता को अवश्य रहेगा। श्रोता को भी वाक्य घटक तत्तत पदार्थ का स्मरण होने पर किसी स्थल में संशयात्मक और किसी स्थल में निश्चयात्मक योग्यता ज्ञान को शाब्दबोध से पूर्व होने में कोई बाधा नहीं है।

(३) नव्यास्तु योग्यताया ज्ञानं न शाब्दज्ञाने कारणम् वह्निना सिञ्चति इत्यादौ सेके वह्निकरणकत्वाभाव रूपाऽयोग्यता निश्चयेन प्रतिबन्धा न्न शाब्दबोधः। (४) तदभावनिश्चयस्य लौकिक सन्निकर्षाजन्य दोषविशेषाजन्य ज्ञानमात्रे प्रतिबन्धकत्वाच्छाब्दबोधं प्रत्यपि प्रतिबन्धकत्वं सिद्धम्। (५) योग्यता ज्ञान विलम्बाच्च शाब्दबोध विलम्बोऽसिद्ध इति वदन्ति॥

(३) नवीन आचार्य शाब्दबोध के प्रति योग्यता ज्ञान को कारण नहीं मानते वे कहते हैं कि "वह्निना सिञ्चति" इत्यादि स्थल में सिञ्चन में वह्नि करणकत्वाभाव रूप अयोग्यता का निश्चय अर्थात् वह्निसे सिञ्चन नहीं हो सकता है ऐसा निश्चय प्रतिबन्धक है अतः उक्त वाक्य से वह्नि करणक सेक विषयक शाब्दबोध नहीं होगा। (४) क्योंकि "लौकिक सन्निकर्षाजन्य दोष विशेषा जन्य अनाहार्य तत्प्रकारक" ज्ञान मात्र के प्रति अनाहार्य और अप्रामाण्य ज्ञानानास्कन्दित तदभाव प्रकारक निश्चय प्रतिबन्धक है। अतः वह्निकरण कत्वाभाव प्रकारक सेक विशेष्यक निश्चय रहने से वह्निकरणकत्व प्रकारक सेक विशेष्यक शाब्दबोध की उत्पत्ति नहीं हो सकती है तब योग्यता ज्ञानको कारणत्व मानना व्यर्थ है। (५) यदि आप कहें कि कारण विलम्ब से कार्यका विलम्ब अनुभव सिद्ध है तब शाब्दबोध के प्रति योग्यता ज्ञानको कारणत्व नहीं मानें तो योग्यता ज्ञानके विलम्बसे शाब्दबोध का विलम्ब किस प्रकार होगा? इसका उत्तर मूल में देते हैं कि योग्यता ज्ञान के विलम्ब से शाब्दबोध में विलम्ब होताही नहीं है।

का० ८४

आकांक्षां निर्वक्ति, यत्पदेनेत्यादि-

यत्पदेन इत्यादि कारिकासे आकांक्षाका निरूपण करते हैं-

यत्पदेन विनायस्या ननुभावकता भवेत्।
आकांक्षा वक्तुरिच्छातु तात्पर्यं परिकीर्तितम्॥

का० अर्थ।

जिस पदके विना जिस पदमें यादृश शाब्दबोधजनकत्व नहीं होता है तत्पद सहित तत्पदमें तादृश शाब्दबोधानुकूल आकांक्षा रहती है। और वक्ताकी इच्छा तात्पर्य है।

(१) येन पदेन विना यत्पदस्यान्वयाननुभावकत्वं तेन पदेन सह तस्या कांक्षेत्यर्थः। (२) क्रियापदं विना कारकपदं नान्वयबोधं जनयतीति तेन तस्याकांक्षा

(१) इसका अर्थ कारिकार्थमें स्पष्ट है। (२) जैसे "आनयेत्यादि" क्रिया पदके

विना "घटम्" इत्यादि कारक पद घट कर्मक आनयन विषयक शाब्द बोधका उत्पादक नहीं होताहै अतः "आनय" पद सहित "घटम्" इस पदमें तादृश शाब्दबोधानुकूल आकांक्षा मानी जाती है।

(३) वस्तुतस्तु क्रिया कारक पदानां सन्निधान मासत्त्या चरितार्थम्। (४) परन्तु घटकर्मताबोधं प्रति घटपदोत्तर द्वितीया रूपा कांक्षा ज्ञानं कारणम्। तेन घटः कर्मत्व मानयनं कृति रित्यादौ न शाब्दबोधः।

(३) वास्तविक विचार करें तो क्रिया वाचक आनयेत्यादि पद और कर्म वाचक घटमित्यादि पद ये दोनों जहां नहीं हैं अर्थात् इन दोनोंमें एक मात्र है वहां पदोंका सन्निधान रूप आसत्ति नहीं रहने के कारण आसत्ति ज्ञानके अभाव से शाब्दबोध का नहीं होना उपपन्न हो जायगा फिर आकांक्षा ज्ञानको शाब्द बोधके प्रति कारणत्व मानना व्यर्थ है। (४) इसका उत्तर "परन्तु" इत्यादि ग्रन्थसे कहते हैं कि यदि शाब्दबोधके प्रति आकांक्षा ज्ञानको कारणता नहीं मानो जाय तो "घटः कर्मत्वम् आनयनं कृतिः" इस वाक्य स्थलमें घट कर्मत्व आनयन और कृति वाचक उक्त घटादि पदों की परस्पर आसत्ति रहने के कारण आसत्ति ज्ञान और योग्यता ज्ञानादि रूप शाब्दबोध की सामग्री को रहनेके कारण "घटनिष्ठकर्मता निरूपकानयनम् कार्यम्" इत्याकारक शाब्दबोध की आपत्ति होगी। और आकांक्षा ज्ञान को कारणत्व मानने से घटमानय इत्याकारक "घटपदोत्तर द्वितीयात्व एवं आङ् पूर्वक णीञ् धातूत्तर लोडा देशाख्यातत्व" रूप आकांक्षा के ज्ञान का उक्त स्थलमें नहीं रहने के कारण शाब्दबोध की आपत्ति नहीं होगी।

(५) 'अयमेति पुत्रोराज्ञः पुरुषोऽपसार्यताम्' इत्यादौ तु पुत्रेण सह राजपदस्य तात्पर्यग्रहसत्त्वात्तेनैव सहान्वयबोध। पुरुषेण सह तात्पर्यग्रहे तु तेन सहान्वयबोधः स्यादेव।

(५) "अयमेति पुत्रोराज्ञः पुरुषोऽपसार्यताम्" इस स्थल में राज पदको जब पुत्र और पुरुष इन दोनों पदोंके साथ आकांक्षा है तब उक्त वाक्य से कहीं "राज्ञः पुत्रः एति पुरुषोऽपसार्यताम्" इत्याकारक और कहीं "राज्ञः पुरुषः एति पुत्रोऽपसार्यताम्" इत्याकारक जो वैकल्पिक शाब्दबोध होता है वह युक्त नहीं है अर्थात् सर्वत्र "राज्ञः पुत्रः एति" और राज्ञः पुरुषः एति" ऐसा दोनो तरह का शाब्दबोध क्यों नहीं होगा। इस शङ्का का उत्तर देते हैं कि उक्त वाक्यस्थल में राजपद का जहां पुत्र के साथ तात्पर्य्यज्ञान रहता है वहां "राज्ञः पुत्रः एति पुरुषोऽपसार्यताम्" एवं जहां पुरुष के साथ तात्पर्य ज्ञान रहता है वहां "राज्ञः पुरुषः एति पुत्रोऽपसार्यताम्" इत्याकारक शाब्दबोध होता है। कहने का सारांश यह है कि उक्त वाक्यस्थल में उभयाकारक बोधानुकूल आकांक्षा ज्ञान रहने पर भी जहां यादृश बोधानुकूल तात्पर्य ज्ञान रहता है वहां तादृश ही शाब्दबोध होता है।

(६) तात्पर्य निर्वक्ति, वक्तुरिच्छेति।

(६) वक्तुरिच्छेत्यादि कारिकासे तात्पर्य का स्वरूप बतलाते हैं।

(७) यदि तात्पर्यज्ञानं कारणं न स्यात्तदा 'सैन्धवमानय' इत्यादौ क्वचिदश्वस्य क्वचिल्लवणस्य बोधो न स्यात्। (८) न च तात्पर्यग्राहक प्रकरणादीनामेव शाब्दबोधे कारणत्वमस्त्विति वाच्यम् तेषामननुगमात्।

(७) यदि शाब्दबोध में तात्पर्यज्ञान को कारण न माना जाय तो "सैन्धवमानय" इस वाक्यसे यात्रा प्रकरण में अश्वहीका बोध होता है लवणका नहीं। एवं भोजन प्रकरण में लवणही का बोध होता है अश्वका नहीं। यह नियम नहीं हो सकेगा और तात्पर्य ज्ञान को कारण मानने पर यात्रा प्रकरण से सैन्धव पदका अश्वही में तात्पर्य गृहीत होता है। अतः अश्वहीका शाब्दबोध होगा। एवं भोजन प्रकरण से उक्त पदका लवणही में तात्पर्य गृहीत होता है। अतः लवण ही का शाब्दबोध होगा यह नियम उपपन्न होता है। (८) शङ्का—शाब्दबोध कारणीभूत तात्पर्यज्ञान में कारणत्व न मानकर तात्पर्यज्ञान का कारण जो प्रकरणादि उसीमें यदि शाब्दबोध के प्रति कारणत्व मानें तो क्या हानि? समा०—प्रकरण अनन्त प्रकार के हैं और सकल प्रकार साधारण अनुगत धर्म कोई नहीं है अतः अतिप्रसङ्गाद्यनापादक रूप कारणतावच्छेदक नहीं मिलने के कारण प्रकरण में शाब्दबोध जनकत्व नहीं मान सकते हैं।

(९) तात्पर्यज्ञानजनकत्वेन तेषामनुगमे तु तात्पर्यज्ञानमेव लाघवात्कारणमस्तु। (१०) इत्थं च वेदस्थलेऽपि तात्पर्यज्ञानार्थमीश्वरः कल्प्यते।

(९) यदि आप कहें कि तात्पर्य ज्ञान जनकत्व को प्रकरण मात्र में रहने के कारण अतिप्रसङ्गाद्यनापादक तात्पर्य ज्ञान जनकत्व रूप से प्रकरण में शाब्दबोध का जनकत्व क्यों नहीं होगा तो इसके समाधान में हम यह कह सकते हैं कि तात्पर्य ज्ञानत्वापेक्षया तात्पर्य ज्ञान जनकत्व गुरु धर्म है अतः गौरव के भय से तात्पर्य ज्ञान जनकत्व रूप से कारणत्व नहीं मान सकते हैं किन्तु लाघवात् तात्पर्य ज्ञानत्व रूप ही से तात्पर्यज्ञान को कारणत्व है। (१०) शाब्द बोध सामान्य के प्रति तात्पर्यज्ञान में कारणत्व सिद्ध होने पर वेद वाक्य स्थल में शाब्द बोध जनक ज्ञान विषय तात्पर्याश्रयत्वेन ईश्वर की कल्पना की जाती है यदि ईश्वरीय तात्पर्यज्ञान कारण नहीं हो तो तात्पर्य ज्ञान के विना शाब्दबोध होने से व्यभिचार हो जायगा।

(११) न च तत्राध्यापक तात्पर्य ज्ञानं कारणमिति वाच्यम्। सर्गादावध्यापकाभावात्। (१२) न च प्रलय एव नास्तीति कुतः सर्गादिरिति वाच्यम्। प्रलयस्यागमेषु प्रतिपाद्यत्वात्।

(११) शङ्का—वेद वाक्याधीन शाब्द बोध में यदि अध्यापक के तात्पर्य ज्ञान ही को कारणत्व माने तो क्या हानि? समा० सृष्टि के पूर्वक्षण में अध्यापक को नहीं रहने के कारण अध्यापक निष्ठ तात्पर्य के ज्ञान से सृष्ट्यादि काल में वेद वाक्याधीन शाब्द बोध नहीं हो सकेगा अतः ईश्वर की कल्पना आवश्यक है। (१२) यहाँ यदि आप कहें कि प्रलय ही नहीं होता है फिर सृष्ट्यादि किस प्रकार होगा। और सृष्टि का आरम्भ असिद्ध होने पर अध्यापक तात्पर्य ज्ञानको कारण मानने से भी कोई हानि नहीं है यह भी नहीं कह सकते हैं क्योंकि प्रलय "नाहो न रात्रि र्नभो न भूमिर्नासीत्तमोज्योति रभून्न चान्यत्" इत्यादि वेद वाक्य से सिद्ध है।

(१३) इत्थं च शुकवाक्येऽपीश्वरीय तात्पर्य ज्ञानं कारणम्।
(१४) विसंवादिशुकवाक्येतु शिक्षयितुरेव तात्पर्यज्ञानं कारणम्।

(१३) शाब्द बोध सामान्य के प्रति तात्पर्य ज्ञान में कारणत्व सिद्ध होने पर शुकादि वाक्याधीन प्रमात्मक शाब्द बोध में व्यभिचार वारणार्थ ईश्वरीय तात्पर्य ज्ञान ही में कारणत्व मानते हैं (१४) और ईश्वरेच्छा में विलम्बादित्व के भय से शुकवाक्याधीन प्रमात्मक शाब्द बोधमें ईश्वरीय तात्पर्य ज्ञान को कारणत्व नहीं मानकर उक्त शाब्द बोध में शुक शिक्षक पुरुष के तात्पर्य ज्ञान ही को कारणत्व मानना युक्त है।

(१५) अन्येतु नानार्थादौ क्वचिदेव तात्पर्यज्ञानं कारणम्, तथा च शुकवाक्ये विनैव तात्पर्यज्ञानं शाब्दबोधः। (१६) वेदेत्वनादि मीमांसापरिशोधित-तर्कै रेवार्थावधारणमित्याहुः॥

(१५) कितने आचार्यों का मत है कि शाब्द बोध सामान्य के प्रति तात्पर्य ज्ञान कारण नहीं है किन्तु नानार्थक शब्द स्थल ही में तात्पर्य ज्ञान कारण है इसलिये वेद वाक्याधीन, एवं शुक वाक्याधीन, शाब्दबोध को तात्पर्य ज्ञान के बिना होने पर भी उक्त कार्य कारणभाव में व्यभिचार का प्रसङ्ग नहीं है।

(१६) ऐसे "कपिञ्जलान् आलभेत" इत्यादि वेद वाक्यस्थल में महर्षियों के अनादि (पारम्परिक) लाघवज्ञानात्मक तर्क से सहकृत अनुमान के द्वारा कपिञ्जल पदोत्तर बहुवचन का अर्थत्व प्रथमोपस्थित त्रित्व ही में निश्चित होता है इस कारण कपिञ्जलत्रयालम्भ ही उक्त वेद का अर्थ है। ऐसा अवधारण किया जाता है।

इति श्री चन्द्रधारि सिंह शर्म विरचितायां चन्द्रिका टीकायां शब्द परिच्छेदः समाप्तः